thearyasamaj.org
R.N.I. No. 2321/57

ओ३म्

रजि. सं. MTR नं. 04/2013-15

नवम्बर 2014

अंक 10

तपोभूमि

मासिक

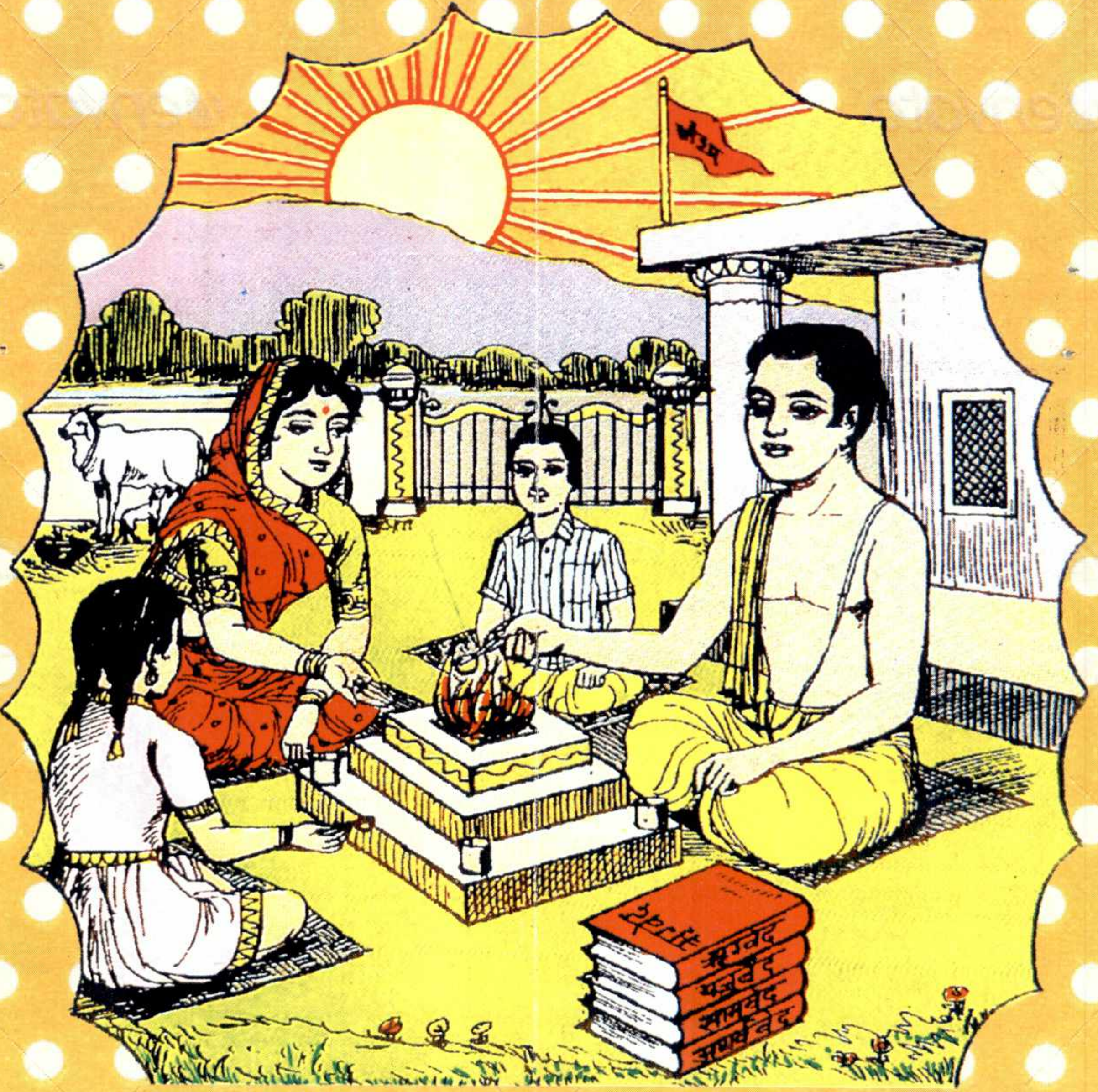

thearyasamaj.org

सेवाव्रती साधुओ ! आओ??

आर्य धर्म और आर्य जाति की सेवा के व्रती लाखों साधु संन्यासी, भारतवर्ष के, ग्रामों, और नगरों में स्वतन्त्रता से विचरते हैं। आर्य जाति के इस घोर संकट के समय उनका क्या कर्तव्य है? इस विषय पर कुछ लिखना अनुचित न होगा। क्योंकि जो प्रभाव आर्य जनता पर इन विरक्तों का पड़ता है, वह और किसी का नहीं पड़ सकता। अविद्या अन्धकार में सोई हुई आर्य जनता को यह महात्मा लोग बहुत शीघ्र जगा सकते हैं। उनका सिंहनाद आर्य सन्तान में नई जान फूंक सकता है। छोटे से छोटे कस्बे में सन्त महात्माओं के मठ बने हुए हैं, जहां से आर्य जाति के संगठन का काम बड़ी आसानी से हो सकता है। आवश्यकता केवल इस बात की है कि साधु सन्त आर्य जाति को संगठनों के उद्देश्य को भली प्रकार जानें।

आर्य जनता आज कैसी दीनावस्था में है इस महान् आर्य जाति के बच्चे आज किस प्रकार शिखा-सूत्र विहीन बनकर ईसाइयत के रंग में रंगे जा रहे हैं। किस प्रकार विदेशी पादरियों पाकिस्तानी गुण्डों और कम्यूनिस्ट देशों के एजेण्टों ने अपना व्यापक जाल बिछा रखा है आर्य धर्म पर विधर्मी गुण्डे कैसा संगठित प्रहार कर रहे हैं, यह सब देखकर कौन ऐसा साधु संन्यासी होगा, जिसका हृदय न फटता हो। आर्य गृहस्थ सदा श्रद्धा और प्रेम से साधुओं की सेवा करते हैं। देवियां बड़ी भक्ति भाव से विरक्तों की पूजा करती हैं, आज उन विरक्तों को आर्य गृहस्थों के प्रति अपना कर्तव्य पालने का समय आ गया है। प्रत्येक साधु को दण्ड और कमण्डलु उठाकर, आर्य जाति संगठन के काम में लग जाना चाहिए। ग्राम और कस्बे में घूमकर अज्ञानी जनता को चैतन्य करना चाहिए, और उसे स्वार्थी लोगों के हथकंडों से बचाना चाहिए। कोई नगर, कोई कस्बा, आर्य जाति के केन्द्र आर्य समाज संगठन से खाली न रहे। बड़ी शान्ति से गृहस्थों को समझा बुझाकर ऐसे विचार फैलावें, कि जिससे आर्य जाति फौलादी दीवार की तरह संगठित हो जावें।

जो साधु महात्मा देश जाति और धर्म की सेवा करना चाहते हैं, वे अब कमर कसकर तैयार हो जायें और संगठन के बिगुल को हाथ में लेकर नगर-नगर में इसे बजाते हुए घूमें। आज बैठने का समय नहीं, जिससे जो कुछ हो सकता है उसे उतना काम करना ही चाहिए। आर्य जाति के संगठन की इस जागृति के काल में जो साधु महात्मा इस महाप्रतापी आर्य जाति की सेवा करेगा, उसका नाम भारत के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में लिखा जायेगा।

यदि हम अपने भगवे कपड़े को सार्थक करना चाहते हैं, तो हमें आर्य जाति के संगठन का कठिन व्रत लेना होगा। स्थान-स्थान पर व्यायाम शालायें खुलवा कर, आर्य बालकों में क्षात्र-धर्म का तेज भरना होगा। उनको उन्नत-मार्ग दिखलाना होगा, लाखों साधु आज इस धर्मक्षेत्र में आकर अपने जीवन को पवित्र बना सकते हैं। धर्म की सेना में आज ऐसे लाखों विरक्तों की आवश्यकता है। इसलिए आइए हम साधुओं का जबर्दस्त संगठन कर आर्य जाति की सेवा में लग जायें इसी में हमारा कल्याण है। ❁❁❁

thearyasamaj.org

तपोभूमि

ओ३म् वयं जयेम (ऋक्0)

शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक कल्याण की साधिका

(आर्य जगत में सर्वाधिक लोकप्रिय मासिक)

वर्ष–60 संवत्सर 2071 नवम्बर 2014 अंक 10

संस्थापक
स्व0 आचार्य प्रेमभिक्षु

संपादकः
आचार्य स्वदेश
मोबा. 9456811519

नवम्बर 2014

सृष्टि संवत्
1960853115

दयानन्दाब्दः 190

प्रकाशक
सत्य प्रकाशन
आचार्य प्रेमभिक्षु मार्ग
मसानी चौराहा, मथुरा
(उ0 प्र0)
पिन कोड–281003

दूरभाषः
0565–2406431
मोबा. 9759804182

अनुक्रमणिका

लेख–कविता		पृष्ठ संख्या
वेदवाणी	–डॉ0 रामनाथ वेदालंकार	4
दयानन्द दिग्विजयम्	–आचार्य मेघाव्रत	5–7
योगेश्वर कृष्ण	–पं0 चमूपति	8
पुरुषोत्तम तथा दैवासुर सम्पद विभागयोग	–डॉ0 सोमदेव शास्त्री	9–12
इस्लाम कैसे फैला	–प्रीतम अमृतसरी	13–16
योग के साधकों को आश्वासन	–प्रो0 उमाकान्त उपाध्याय	17–19
आर्यवीर दल की स्थापना तथा उसके...	–खुशहालचन्द्र आर्य	20–22
दुनिया मानसिक अवस्थाओं की परिछाई है	–बाबू दयाचन्द्र गोयलीय	23–26
वैदिक विज्ञान का वायुतत्त्व	–कृपालसिंह वर्मा	27–29
महर्षि दयानन्द गौरव गाथा	–शिवकरण दुबे 'वेदराही'	30
पूजा–धर्म	–महात्मा हंसराज	31–32
अतीत	–पं0 चतुरसेन शास्त्री	33–34

❋ ❋ ❋

वार्षिक शुल्क 150/ पन्द्रह वर्ष के लिये शुल्क 1500/– रूपये

thearyasamaj.org

वेदवाणी

डॉ० रामनाथ वेदालंकार

ऋषि जन बहुत शक्तिशाली होते हैं

घोरा ऋषयो नमो अस्त्वेभ्यश्चक्षुर्यदेषां मनसश्च सत्यम्।
बृहस्पतये महिष द्युमन्नमो विश्वकर्मन्नमस्ते पाह्य स्मान्॥ अथर्व0 2.35.4

शब्दार्थ:–

(घोरा:) बहुत शक्तिशाली होते हैं (ऋषय:) ऋषि जन, (नम: अस्तु) नमस्कार हो (एभ्य) इन्हें, (यत्) जिससे (एषाम्) इनकी (चक्षु:) आँख, दृष्टि (मनस: च सत्यम्) और मन का सत्य (हमें प्राप्त हो)। (महिष) हे महान् जगदीश्वर! (बृहस्पतये) तुझ बृहस्पति को (द्युमत् नम:) तेजोमय नमन हो। (विश्वकर्मन्) हे विश्व के रचयिता! (नमस्ते) तुझे नमस्कार हो। (पाहि अस्मान्) पालन कर हमारा।

भावार्थ:–

ऋषि वे कहाते हैं, जो द्रष्टा होते हैं, सूक्ष्मदर्शी और दूरदर्शी होते हैं, शास्त्रज्ञान जिन्हें हस्तामलकवत् होता है, जो अध्ययन और अनुभव दोनों के धनी होते हैं, जो ज्ञान और आचरण दोनों में पारंगत होते हैं, जिनकी भौतिक और आध्यात्मिक दोनों दृष्टियाँ तीक्ष्ण होती हैं, जो अपरा और परा दोनों विद्याओं के अनुभवी होते हैं, जो पानी में कमल के समान संसार में निर्लिप्त रहते हैं, जो भोग में रस न लेकर योग में रस लेते हैं, जो समाधि द्वारा ईश्वर के दर्शन हो जाने पर भी मोक्ष को त्याग कर जगत् के कल्याणार्थ परिव्राट् बनकर घूमते हैं। उनमें अपार शक्ति होती है। उनके आशीर्वाद सत्य सिद्ध होते हैं। एक बार आँख से किसी को देखकर ही उसे दुर्जन से सन्त बना देते हैं। उनके मन का सत्य मनुष्य को प्रभावित करके ही रहता है। ऐसे ऋषियों को खोजकर हम उनकी शरण में जाते हैं और उन्हें नमस्कार करते हैं, उन्हें आत्मसमर्पण करते हैं, जिससे उनकी आँख और मन का सत्य हमें भी प्राप्त हो।

परन्तु सबसे बड़ा ऋषि तो बृहस्पति है, विशाल लोकों का अधिपति परमेश्वर है। वह स्वयं भी महान् है, अतएव उसे महद्वाची 'महिष' नाम से पुकारा जाता है। उसे हम ऐसा नमन करते हैं, जो 'द्युमत्' है, तेजोमय है, सशक्त है। जिस नमन में जितना अधिक समर्पण होगा, वह उतना ही अधिक तेजोमय या सशक्त होगा। परमेश्वर का नाम 'विश्वकर्मा' ऋषि भी है, क्योंकि वह जगत् के उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय के सब कर्मों को करनेवाला है। हे विश्वकर्मन्! हम आपको भी नमस्कार करते हैं। आप हमारी रक्षा कीजिए, पापों से हमारा त्राण कीजिए। ❁❁❁

thearyasamaj.org

गतांक से आगे–

दयानन्द दिग्विजयम्

लेखकः आचार्य मेधाव्रत

दशमः सर्ग

गुरो र्निदेशे स्वशिरो विनामितं समर्पितं जीवनमेव तत्क्षणम्।
तदुत्तरे नैव विचिन्तितं मनाङ् निदर्शिता सद्गुरुभक्तिरुत्तमा।। 107।।

दयानन्द ने गुरु की आज्ञा पर अपना शिर झुका दिया और तत्क्षण ही अपने जीवन को समर्पित कर दिया। गुरुजी के गुरुदक्षिणा मांगने पर इन्होंने उत्तर में जरा भी विलम्ब नहीं किया और अपनी आदर्श गुरुभक्ति का निदर्शन उपस्थित कर दिया।। 107।।

प्राग् वैदिकानेहसि यावदायुः क्वचिद्गुरोराश्रम एकशिष्यः।
द्विजा विनेयाः कुहचिन्यवात्सुर्विद्यां पठन्तो गृहमेधितीर्थात्।। 108।।

प्राचीन वैदिक युग में किन्हीं गुरुओं के पास एक ही शिष्य जीवन पर्यन्त ब्रह्मचर्यपूर्वक निवास करता था और किसी गुरु के पास दो या तीन ब्रह्मचारी विद्याध्ययन करते हुए निवास करते थे।। 108।।

शुश्रूषमाणा ऋषिवर्यमेके गाश्चारयन्तो विपिने भ्रमन्तः।
निसर्गदिव्या अपि लब्धविद्याः सद्ब्रह्मचर्यं न्यवसँश्चरन्तः।। 109।।

और कुछ विद्यार्थी वैदिक युग में ऋषियों की सेवा-शुश्रुषा करते थे, उनकी गौओं को जंगलों में चराते थे और स्वतन्त्रतापूर्वक जंगलों में घूमते हुए प्रकृति देवी से ही ज्ञान प्राप्त किया करते थे। इस तरह अपना जीवन ब्रह्मचर्याश्रम में ही व्यतीत कर देते थे।। 109।।

श्रीश्वेतकेतुप्रमुखा व्रतीन्द्रागुरो कुलेऽध्यैयत वेदविद्याः।
इन्द्रो भरद्वाज इति प्रसिद्धावाचेरतु र्ब्रह्म जनित्रयं तौ।। 110।।

ऐसे शिष्यों में श्रीश्वेतकेतु आदि श्रेष्ठ ब्रह्मचारियों ने गुरुकुलों में रहकर वेदविद्याओं का अध्ययन किया था। प्रसिद्ध इन्द्र और भरद्वाज इन दोनों ने तो तीन जन्म तक ब्रह्मचर्य के पालन पुरस्सर ब्रह्मविद्या का अध्ययन किया था।। 110।।

अंके प्रकृत्या रुचिरे विशालाविद्यालयास्सद्गुरुपर्णशालाः।
तरंगिणीनीरतरन्मरालाः पुराऽभवन्मंजुरसालमालाः।। 111।।
तपोधनारण्यचरत्कुरंगानिरन्तरं कुंजलसद्विहंगा।
पुष्पावलीगुंजदनन्तभृंगाः प्रसंगतस्संगतसाधुसंगाः।। 112।।

thearyasamaj.org

प्राचीन काल में प्रकृति देवी की निसर्ग सुन्दर गोद में विशाल विद्यालय हुआ करते थे, जिनमें श्रेष्ठ गुरुओं की पर्णकुटियाँ सुन्दर आम्रवाटिकाओं में हुआ करती थीं। जहाँ पर आसपास की नदियों के स्वच्छ नीरे में राजहँस कल्लोल किया करते थे, तपोवनों में हरिणों के झुण्ड चरा करते थे। अनेक प्रकार के पक्षीगण कुंजों में कलरव किया करते थे। असंख्य भृंगामालायें पुष्पालियों पर गुंजन किया करती थीं और जहाँ समय-समय पर साधुगणों का सत्संग भी हुआ करता था॥ 111-112॥

अगस्त्यकण्वर्षिवररोत्तमाश्रमाः सहस्रशिष्यालिविभूषितोटजाः।
मखाग्निधूमावृतवायुमण्डलानिजार्यभूमौ व्यलसन् युगे युगे॥ 113॥

साथ ही इस आर्यभूमि पर अगस्त्य और कण्व जैसे महर्षियों के विशाल आश्रम भी हुआ करते थे, जहाँ हजारों शिष्यों की पर्णकुटियाँ शोभित होती रहती थीं एवं जहाँ पर यज्ञाग्नि के धूम से वायुमण्डल घिरा रहता था॥ 113॥

काशीतक्षशिलाविशालमिथिलाश्रीविश्वविद्यालयानालन्दादिमहाविहारमणयो रेजु र्युगे मध्ये।
नानाशास्त्रचणाः कलागमविदो विद्यार्णवाः पण्डितायेभ्यो निर्ययुरार्यसंस्कृतियुता विश्वम्भरावर्त्तिनः॥ 114॥

इस भारतवर्ष में मध्ययुग में भी काशी, तक्षशिला, मिथिला, नालन्दा, विक्रमशिला, उदन्तपुरी आदि विशाल विश्वविद्यालय एवं महाविहार विद्यमान थे। जिनमें पृथिवी भरके विद्यार्थी नाना प्रकार की विद्याओं और कलाओं में पारंगत होकर आर्य-संस्कृति के अभिमानी निकला करते थे॥ 114॥

येन व्याकृतिसूत्रमौक्तिकसरः प्राणायि लोकोत्तरोविद्वत्कण्ठविभूषणं सुरमनःसम्मोहनस्सुन्दरः।
सोऽयं पाणिनियोगिहंसविबुधो विद्यां यतो लब्धवान् सेयं तक्षशिला कलागमखनिःस्याद्विश्ववन्द्यातुला॥ 115॥

योगिवर महर्षि पाणिनि ने भी शास्त्र एवं कलाओं की खान, अनुपम विश्ववन्दनीय तक्षशिला विश्वविद्यालय में ही समग्र विद्याएँ प्राप्त की थीं। इन्होंने अष्टाध्यायी नामक संस्कृत व्याकरण के एक महान् ग्रन्थ-रत्न की रचना की थी। यह अष्टाध्यायी सूत्ररूपी मोतियों की माला है, जो विद्वानों के कण्ठों को अलंकृत करती थी और उनके मनों को मुग्ध कर लेती हैं॥ 115॥

नन्दानैश्वर्यमत्तान्निजनयबलतोनाशयित्वाऽधिराज्ये, मौर्यं श्रीचन्द्रगुप्तं धृतविनयगुणं यो न्यधत्त द्विजेन्द्रः।
चाणक्यो मन्त्रिवर्यो नृपनयनिपुणः सोऽर्थशास्त्रप्रणेता, यस्यासीच्छात्ररत्नं जगति विजयते विश्वविद्यालयोऽयम्॥116॥

राजनीति निपुण, कौटिल्यार्थशास्त्र के निर्माता, मंत्रीश्वर चाणक्य भी इसी विश्वविद्यालय के छात्र-रत्न थे। इस द्विजराज ने अपने नीति-चातुर्य से ऐश्वर्यमत्त नवनन्दों का नाश करके साम्राज्यपद पर विनयशाली, महापराक्रमी, चन्द्रगुप्त मौर्य को बैठाया था। इस प्रकार के विश्वविद्यालय संसार में क्यों न गौरवशाली हों?॥ 116॥

नालन्दाशारदोर्व्या अनुपमविबुधः शीलभद्रो यतीन्द्रस्तीर्थेन्द्राद्धर्मपालादधिगतविमल ज्ञान आचार्यमानम्।
तत्रैवाप्त्वा स्वबुद्ध्याहृदयोलब्धसम्राट्प्रतिष्ठोविश्वग् विद्याप्रतापं व्यतनुत नितरां विश्वविद्यालयानाम्॥ 117॥

अनुपम विद्वान् भिक्षुवर शीलभद्र ने नालन्दा विश्वविद्यालय के महाविहार में आचार्य धर्मपाल

thearyasamaj.org

से सम्पूर्ण विद्याओं को पढ़कर अपने बुद्धि-बल से गुरु के हृदय को जीतकर, उसी विश्वविद्यालय में आचार्य के बहुमान पद को प्राप्त कर लिया था और सम्राट् हर्ष से प्रतिष्ठा प्राप्त की थी। साथ ही संसार भर में नालन्दा की प्रतिष्ठा फैला दी थी॥ 117॥

कॅन्टो यथाऽभूद्धरिवर्ष एषन्यायागमानां शुभतत्त्वदर्शी।
न्यायेऽद्वितीयो वसुबन्धुरेवं ख्यातस्तदाचार्य उदात्तसत्वः॥ 118॥

जैसे यूरोप में कॉन्ट तर्कशास्त्र के महापण्डित हो गये, वैसे ही भारत के नालन्दा विश्वविद्यालय में उदात्तसत्त्व आचार्य वसुबन्धु न्यायशास्त्र के अद्वितीय पण्डित थे॥ 118॥

अतीशरत्नाकरवासुदेववागीश्वरश्रीरघुनाथमुख्याः।
आचार्यवर्या अभवन्नमीषां बुद्धिप्रभानन्दितविज्ञचित्ताः॥ 119॥

विक्रमशिला के आचार्य दीपंकर (अतीश) और द्वारपण्डित रत्नाकर (शान्ति) वागीश्वर कीर्त्ति, तथा मिथिला के नैयायिक रघुनाथ एवं नवद्वीप के पं0 वासुदेव नामक महान् आचार्य हो गये। इन लोगों ने विद्वज्जगत् में अपने बुद्धिप्रभाव से विद्वानों के मनों को आनन्दविभोर कर दिया था॥ 119॥

इदानींतना विश्वविद्यालयास्ते यथा सर्वतोभद्रशालाविशालाः।
सुवप्रा महारामपदमाकरान्ताः सहस्रैस्तसतीर्थ्यैस्सुतीर्थैः परीताः॥ 120॥
तथासँस्तदानीं महोद्यानवापीसभागारविद्यार्थिवासालिरम्याः।
अनेकागमाध्यापनाचार्यपूताः सदोदात्तचारित्र्यचन्द्राभिरामाः॥ 121॥

वर्तमानयुग के ऑक्सफोर्ड, केम्ब्रिज आदि विश्वविद्यालय जैसे बड़े-बड़े भव्य भवनों, उद्यानों, मार्गों, तालाबों, एवं विशाल छात्रालयों की हारमालाओं से सुशोभित हैं तथा जिनमें हजारों विद्यार्थी एवं सैकड़ों अध्यापक अध्ययन-अध्यापन करते रहते हैं, वैसे ही मध्ययुग के नालन्दा, तक्षशिला, विक्रमशिला, नवद्वीप, मिथिला आदि विश्वविद्यालयों में भी बड़े-बड़े सभा-भवन, छात्रावास, अध्यापक-सदन, उद्यान, बावड़ी, तालाब आदि रम्य-रम्य साधन उपस्थित थे। उनमें भी महाबुद्धिशाली, पवित्रचरित्र, अनेक विद्याओं में पारंगत आचार्य एवं विद्यार्थी रहा करते थे॥ 120-121॥

आर्यसंस्कृतिगंगाया अमृतोद्गमसुन्दरम्।
विभग्नं यवनव्याघ्रैः सरस्वत्यास्सुमन्दिरम्॥ 122॥

कालक्रम से दैववशात् आर्यसंस्कृति की पवित्र गंगा के सुन्दर अमृत के उद्गमस्थान इन सरस्वती के मन्दिरों को संस्कृति के शत्रु मुसलमान-व्याघ्रों ने नष्ट भ्रष्ट कर दिया॥ 122॥

बौद्धसंस्कृतिगन्धाढया साहित्योद्यानवाटिका।
म्लेच्छशाखामृगैश्छिन्ना विद्याम्भोरुहदीर्घिका॥ 123॥

बौद्ध संस्कृति से सुवासित, विद्याकमलिनी से अलंकृत, साहित्य की उद्यानवाटिका हा ! म्लेच्छ

शेष पृष्ठ संख्या 34 पर-

thearyasamaj.org

योगेश्वर कृष्ण

सोतों का संहार

लेखकः पं. चमूपति

धृतराष्ट्र के पास बैठे-बैठे श्रीकृष्ण को विचार स्फुरित हुआ कि कहीं अश्वत्थामा रात के समय आक्रमण ही न कर दे! इन्होंने धृतराष्ट्र से छुट्टी माँगी और सीधे पाण्डवों के शिविर में गए। महाभारत में आगे यह नहीं लिखा कि उस सम्भावित आक्रमण के प्रतिकार के लिए इन्होंने प्रबन्ध क्या किया।

कृप, अश्वत्थामा तथा कृतवर्मा ने दुर्योधन से, जब वह अपने जीवन के अन्तिम श्वास ले रहा था, भेंट की थी। उसने मरते-मरते अश्वत्थामा को सेनापतित्व का अभिषेक कराया था। रात का समय इन्होंने कहीं दूर जंगल में जा बिताया। कृप और कृतवर्मा तो सो गए किन्तु अश्वत्थामा जागता रहा। उस पर बदले का भूत सवार था। बैठे-बैठे उसने अपने साथियों को जगा दिया और कहा कि जिस वृक्ष के नीचे हम विश्राम कर रहे हैं, इस पर कौओं के घोंसले हैं। अचेत पड़े कौओं पर अभी उल्लू झपटा था। वह इन्हें सोते-ही-सोते में मार गया। मुझे पाण्डवों से बदला लेने का यह उपाय पसन्द आया है कि उन पर निद्रित अवस्था में आक्रमण किया जाय। कृप ने, जो अश्वत्थामा का मामा था, इस विचार की नैतिक दुष्टता प्रदर्शित कर उसे इस कलुषित कर्म से रोकना चाहा, परन्तु अश्वत्थामा रुका नहीं। अन्त को तीनों ने रात्रि के ही समय पाण्डवों के शिविर पर छापा मारा।

ये सीधे पांचाल राज के आवास पर पहुँचे। धृष्टद्युम्न से अश्वत्थामा का विशेष द्वेष था, क्योंकि उसी ने योगावस्थित द्रोण का सिर कलम कर जमीन पर फेंक दिया था। जैसे हम ऊपर कह चुके हैं, इस क्रूर प्रहार की सम्भावना श्री कृष्ण ने की थी। संभवतः पांचालों ने श्री कृष्ण की चेतावनी पर ध्यान न दिया हो, या रक्षा के सब उपाय रहते भी छापा मारनेवालों ने लुक-छिपकर आकस्मिक छापा मारा हो, कुछ हो, तीन योद्धाओं के हाथों अनेक वीरों का संहार एकसाथ हो गया। पांचालों की छावनी द्रौपदी के जायों की ननसाल थी। वे भी वहीं सो रहे थे। अन्य रथियों-महारथियों के साथ इस बेखबरी के युद्ध में वे भी काम आए। इस सुप्त-संहार से बचे पाँच पाण्डव, श्रीकृष्ण और सात्यकि। इस प्रकार जहाँ कल की प्रलयंकर लड़ाई में कौरव-दल के तीन-महारथी बच गए थे, वहाँ आज के गुप्त छापे में पाण्डव-सेना के भी केवल सात महायोद्धा शेष रहे।

दूसरे दिन कौरवों के प्रासाद में पाण्डवों की धृतराष्ट्र आदि गुरुजनों से भेंट और राजमहलों में रानियों का विलाप-ये दोनों दृश्य अत्यन्त करुणाजनक हुए। भारतों का सारा अवशिष्ट वंश अब रणक्षेत्र में पहुँचा। प्रत्येक विधवा बाला ने अपने मृत पति के शव को ढूँढा और वह उसके पास बैठकर रोई। अभिमन्यु की धर्मपत्नी उत्तरा का विलाप अत्यन्त रोमांचकारी था। उस गरीब का विवाह हुए अभी छः मास ही हुए थे। मित्र-अमित्र दोनों ने उस बालविधवा की व्यथा देख संवेदना के अविरल आँसू बहाए। ❁

thearyasamaj.org

पुरुषोत्तम तथा दैवासुर सम्पद विभागयोग

लेखकः डॉ० सोमदेव शास्त्री, मुम्बई

संसाररूपी (अश्वत्थ) वृक्षः–

गीता के 13 वें और 14 वें अध्याय में क्षेत्र-क्षेत्रज्ञ अर्थात् जीवात्मा और शरीर अथवा चेतन और जड़ का वर्णन करके क्षेत्र की विस्तृत व्याख्या करते हुए उसमें विद्यमान सत्व, रज और तम इन तीनों गुणों का विवेचन किया है। इस अध्याय के प्रारम्भ में संसाररूपी वृक्ष कैसा है? इसका आलंकारिक वर्णन करते हुए लिखा है कि एक अश्वत्थ वृक्ष है अर्थात् पीपल का पेड़ है। इसकी जड़ें ऊपर की ओर हैं। शाखाएं नीचे की ओर हैं। पेड़ सनातन काल से चला आ रहा है 'अव्यय' है। इस पेड़ के पत्ते वेदों के छन्द हैं। इस वृक्ष को जिसने जान लिया है वह पुरुष सच्चा वेदवेत्ता है। इस वृक्ष की शाखाएं नीचे और ऊपर फैली हुई हैं। इसकी शाखाओं में विषयों की कोपलें फूट रही हैं। ये कोपलें और डालियां प्रकृति के सत्व? रज और तम इन गुणों की खाद से बढ़ रही हैं। जैसे इसकी कुछ जड़ें ऊपर की ओर हैं वैसे ही इसकी कुछ जड़ें नीचे की ओर भी फैली हुई हैं। इन्हीं के द्वारा मनुष्य लोक में कर्मों के अनुसार मानव का बन्धन होता है।

इन श्लोकों में संसार को 'अश्वत्थ' वृक्ष कहा है। यह शब्द 'पीपल' के पेड़ के लिये प्रयुक्त होता है। इस शब्द का अर्थ –श्व–अर्थात् कल, थ (स्थ) स्थित रहनेवाला अर्थात् **कल तक रहनेवाले को 'श्वत्थ' कहते हैं और जिसका कल तक रहने का भी भरोसा न हो,** जो कल तक भी टिकने या रहनेवाला न हो उसे अ+श्वत्थ=**अश्वत्थ** कहते हैं। यह संसार क्षण भंगुर है, अनित्य है, हमेशा रहनेवाला नहीं है। इसलिये इसको 'जगत्' भी कहते हैं क्योंकि यह निरन्तर चल रहा है, परिवर्तन या गतिशील है।

संसाररूपी वृक्ष की जड़ ऊपर हैं अर्थात् यह ऐसा पेड़ है जिसकी जड़ें ऊपर तथा शाखाएं नीचे की ओर हैं। जबकि अन्य वृक्षों की जड़ें नीचे और शाखाएं ऊपर की ओर होती हैं। इसकी जड़ें ऊपर की ओर हैं अर्थात् संसाररूपी वृक्ष की जड़ें ब्रह्म में हैं। वह इस वृक्ष का निर्माता है। वह इससे परे है, श्रेष्ठ है, उत्कृष्ट है। महत्तत्व (बुद्धि) अहंकार, मन, इन्द्रियां और इनके विषय तथा पंचमहाभूत इस विश्ववृक्ष की शाखाएं हैं। प्रत्येक शाखा सत्व, रज, तम इन गुणों से युक्त हैं, संसार में कहीं सात्विकता, कहीं राजसिकता और कहीं तामसिकता देखने को मिलती है। मनुष्य अपने **कर्मों के आधार पर** ही **उच्च योनियों** और **निम्न योनियों में जन्म** लेता है। यही इस वृक्ष की जड़ों का ऊपर और नीचे होने का तात्पर्य है।

शरीर के लिये भी अश्वथः–

जब मनुष्य इस उल्टे विश्ववृक्ष पर नीचे से ऊपर चढ़ता हुआ अर्थात् स्थूल से सूक्ष्म तक जाता हुआ इस वृक्ष की जड़ों को विवेकरूपी तलवार से काट डालता है, जीवात्मा प्रकृति से अपना सम्बन्ध तोड़कर परमात्मा के साथ जोड़ लेता है, तो परमात्मा अर्थात् मुक्ति को प्राप्त कर लेता है। सच्चा वेदवेत्ता

thearyasamaj.org

वेदों का विद्वान् वही है, जो इस अश्वत्थ विश्ववृक्ष को तात्त्विकरूप से जान लेता है। इसका वर्णन वेदों में भी विद्यमान है। ऐसा ही वर्णन **कठोपनिषद्** में भी आया है कि यह संसार ऐसा अश्वत्थ वृक्ष है जिसकी जड़ें ऊपर और शाखाएं नीचे हैं और यह सनातन है। कुछ विद्वानों ने इन श्लोक का अर्थ करते हुए लिखा है कि मनुष्य शरीर ही अश्वत्थ वृक्ष है। इसकी जड़ अर्थात् सिर ऊपर है। शरीर की सारी नस नाड़ियों का केन्द्र मस्तिष्क (सिर) ऊपर है। नस नाड़ियों (स्नायुमण्डल) (NEWVOUS SYSTEM) के द्वारा मनुष्य ज्ञान प्राप्त करता है और कर्म करता है। मस्तिष्क से ही नाड़ियां शरीर में सर्वत्र जा रही हैं। यही इसकी शाखा नीचे की ओर है। शरीर का भी कोई भरोसा नहीं कि कल यह रहेगा या नहीं, इसलिये इसे 'अश्वत्थ' कहते हैं।

तत्त्व ज्ञानी मुक्तः–

जो मनुष्य इस वृक्ष की जड़ों को अपने विवेक से काट डालता है अर्थात् जब अपना सम्बन्ध प्रकृति की बजाय परमात्मा के साथ जोड़ लेता है तब उसका जीवन कैसा हो जाता है? इस विषय में गीता में लिखा है कि जो लोग अभिमान और मोह से मुक्त हो गये हैं, जिन्होंने आसक्ति के दोष को जीत लिया है। जो दिन रात आत्मा में निमग्न है। जिनकी कामनाएं शान्त हो गयी हैं, जो सुख दु:ख आदि द्वन्दों से मुक्त हो गये हैं, वे उस अविनाशी पद को प्राप्त करते हैं, क्योंकि सामान्यरूप से मनुष्य का जीवन त्रिगुणात्मक प्रकृति से बन्धे रहने के कारण राग द्वेष मोहादि से ग्रसित रहता है। वास्तविकता को जाननेवाला व्यक्ति प्रकृति को आत्मा से पृथक् अनुभव करने लगता है तब उसका जीवन वैसा ही बन जाता है जैसा कि ऊपर वर्णन किया गया है।

साधारण व्यक्ति और तत्त्वज्ञानी में भेदः–

साधारणरूप से जीव की क्या स्थिति होती है इस विषय में गीता में लिखा है कि जब यह जीव शरीर से निकल जाता (मृत्यु हो जाती) है या जब शरीर में आकर स्थित हो जाता है, (जन्म हो जाता है) तब प्रकृति के सत्व? रज, तम इन तीन गुणों के सम्पर्क में आकर सात्विक, राजसिक और तामसिक भोगों को भोगता है। उसे मूढ़ (अविवेकशील) व्यक्ति नहीं देख पाते हैं, किन्तु जिसके ज्ञान की आंख, जो तत्वज्ञानी हैं वे उसे देख पाते हैं। एक वेदवेत्ता या तत्त्वज्ञानी व्यक्ति ही जीवात्मा और प्रकृति या उससे बने शरीर तथा संसार की वास्तविकता को देखकर, उसके अनुसार आचरण कर सकता है। तत्वज्ञानी शरीर और आत्मा को पृथक–पृथक् ही नहीं समझता है अपितु वह यह भी जानता है कि जैसे शरीर में आत्मा है वैसे ही आत्मा में परमात्मा भी विद्यमान है। इसी विषय में गीता में लिखा है कि यत्नपूर्वक साधना में लगे हुए योगी लोग जैसे शरीर में आत्मा को देख लेते हैं, वैसे ही आत्म में परमात्मा को देख लेते हैं। अचेता अर्थात् जिनका कार्य चित–बुद्धिपूर्वक नहीं होता है, जिन्होंने अपने अन्तकरण: को शुद्ध नहीं किया है, वे यत्न करने पर भी उसे नहीं देख पाते हैं। शरीर में आत्मा और आत्मा में परमात्मा को देखना या अनुभव करना भी यत्नशील व्यक्ति ही कर सकता है।

thearyasamaj.org

जीव और ईश्वर में भेदः–

इस विषय को अधिक स्पष्ट करते हुए लिखा है कि मैं (परमात्मा) सबके हृदय में बैठा हूँ। मेरे (परमात्मा के) द्वारा स्मृति और ज्ञान होता है। परमात्मा के द्वारा संशयादि दोषों का नाश होता है। परमात्मा को वेदों के द्वारा ही जाना जाता है, वही वैदिक सिद्धान्तों का प्रतिपादन करनेवाला और वेदों को जाननेवाला है। परमेश्वर सभी के हृदय में विद्यमान है। सभी का **हृदय अलग है** और **परमात्मा अलग है, जीव** और **ईश्वर** के पृथक्–पृथक् अस्तित्व का वर्णन करते हुए स्पष्ट किया है कि ईश्वर के वेदों के द्वारा जाना जा सकता है। क्योंकि वह वेदों का और वैदिक मान्यताओं का बनानेवाला तथा ज्ञाता है। इसलिये उसके स्वरूप को वेदों से ही जाना जा सकता है। परमात्मा का ज्ञान होने पर मनुष्य में विद्यमान दोषों का भी क्षय हो जाता है क्योंकि साधना करने से उसके जीवन में पवित्रता आ जाती है।

ईश्वर–जीव–प्रकृति में भिन्नताः–

ईश्वर, जीव और प्रकृति इन तीनों को पुनः स्पष्ट करते हुए गीता में लिखा है कि इस संसार में दो पुरुष हैं, एक **क्षर** है, नश्वर है और दूसरा **अक्षर**, अविनाशी है। सब भूतों को क्षर या कूटस्थ को अक्षर कहते हैं। इन दोनों से भिन्न एक अन्य उत्तम **पुरुष** है, जिसे **परमात्मा** कहा जाता है। वह अव्यय है। **ईश्वर** है, तीनों लोकों में प्रविष्ट होकर उनका भरण–पोषण करता है। यहाँ पर स्पष्ट ही क्षर (प्रकृति) अक्षर (जीवात्मा) और इनसे परे **उत्तम पुरुष परमात्मा** का स्पष्ट उल्लेख है। प्रकृति से बना हुआ यह संसार विनाशशील–परिवर्तनशील तथा **अनित्य** है। इसलिये इसको 'क्षर' कहा गया है। वैसे तो प्रकृति भी नित्य है किन्तु उससे बना हुआ संसार अनित्य, अस्थायी, क्षर है। इसमें रहनेवाला जीवात्मा **अक्षर अर्थात् नष्ट न होनेवाला,** नित्य, अविनाशी है तथा इन दोनों से अर्थात् प्रकृति और जीवात्मा से अन्य एक और तत्त्व है और वह उत्तम, श्रेष्ठ है इसलिये उसे परमात्मा कहते हैं।

ब्रह्म पुरुषोत्तम क्यों हैं?:–

प्रकृति और जीवात्मा से परमात्मा को यहां श्रेष्ठ क्यों कहा है? इस विषय में इनके गुणों का विवेचन करते हुए उल्लेख करते हैं कि प्रकृति में सत् सत्ता है, अस्तित्व है, यह एक गुण विद्यमान है। जीव में **सत्** और **चित्** ये दो गुण विद्यमान हैं। अर्थात् जीव में सत्ता या अस्तित्व के साथ–साथ जीव में दूसरा गुण चेतमताज्ञान का है। प्रकृति जड़ है, इसलिये यह अचेतन है। परमात्मा **सत्** भी है, **चित्** भी है **आनन्द** भी है। इसीलिये उसे **सच्चिदानन्दस्वरूप** कहा जाता है। सत् अर्थात् उसका अस्तित्व है, सत्ता है। वह चेतन–ज्ञानस्वरूप है और आनन्दस्वरूप है। आनन्द उसका स्वाभाविक रूप है। जीवात्मा सुख दूसरे से प्राप्त करता है। उसका सुख नैमित्तिक (दूसरों से प्राप्त होने वाला) है। वह सुख के लिये प्रयत्नशील रहता है। किन्तु परमात्मा स्वभाव या स्वरूपतः 'आनन्द' गुणयुक्त है। इसलिये उपनिषदों में कहा गया है कि परमेश्वर का ज्ञान, क्रिया और बलादि स्वाभाविक है। प्रकृति में एक गुण (सत्) है, जीवात्मा में दो गुण (सत् चित्) हैं किन्तु परमात्मा में इन दोनों से एक गुण (आनन्द) अधिक अर्थात् तीन गुण हैं। परमात्मा

thearyasamaj.org

तो सत्, चित्, आनन्द, सच्चिदानन्द है। इसलिये गीताकार ने परमात्मा को **'उत्तमः पुरुषस्त्वन्यः'** इन दोंनों से उत्तम या श्रेष्ठ कहा है इसलिये वह क्षर (प्रकृति या प्रकृति से बने संसार) से परे हैं तथा अक्षर जीवात्मा से उत्तम है। इसलिये संसार और वेद में वह परमात्मा पुरुषोत्तम नाम से जाना जाता है। परमात्मा इनसे श्रेष्ठ, सर्वत्र विद्यमान है। सभी के हृदय में है, सर्वश्रेष्ठ है।

जीव परमात्मा का अंशः–

जीवात्मा प्रकृति की अपेक्षा परमात्मा से अधिक निकट है अर्थात् प्रकृति में एक गुण और जीवात्मा में दो (सत् चित्) गुण है। इस दृष्टि से जीव को परमात्मा का ही अंश है यह गीता में लिखा है, परमात्मा का ही एक अंश इस संसार में जीव बनकर सनातन काल से मौजूद है। यह जीव प्रकृति में रहने वाली पांचों इन्द्रियों (ज्ञानेन्द्रियों) और मन को अपनी ओर खींच लेता है अर्थात् जन्म लेते समय मनइन्द्रियादि जीवात्मा के साथ जाती हैं। परमेश्वर सर्वव्यापक अखण्ड और पूर्ण है। भौतिक पदार्थ मकान, कपड़ा, रोटी, ईंट, पत्थरादि के अंश अर्थात् टुकड़े के समान परमात्मा का कोई अंश या टुकड़ा असंभव है क्योंकि अंश या टुकड़ा होते हैं ही वह खण्डित हो जायगा, अपूर्ण हो जायगा। अखण्ड एकरस पूर्ण नित्य और शाश्वत नहीं रह सकेगा। जो गुण परे पदार्थ में होते हैं वही गुण उसके टुकड़े या अंश में होते हैं। यदि जीव को परमात्मा के भौतिक अंश के समान अंश माना जाय तो यह दोष उपस्थित होता है कि **परमात्मा पूर्ण ज्ञानी है सर्वज्ञ है**, जबकि जीवात्मा अल्पज्ञ है।

'आनन्द' नैमित्तिक और स्वाभाविक गुणः–

परमात्मा आनन्दस्वरूप है जबकि जीवात्मा में सुख या आनन्द गुण स्वाभाविक नहीं है, उसको सुख या आनन्द दूसरों से प्राप्त होता है। उसका सुख और आनन्द तो नैमित्तिक है। जैसे लोहे को अग्नि के अन्दर डाल दो तो लोहा आग जैसा लाल हो जायगा और जब उसको अग्नि से निकाल दो तो धीरे–धीरे ठण्डा हो जाता है। अग्नि का गुण उसमें समाप्त हो जाता है। इसी प्रकार परमात्मा के निकट जब जीव जाता है। (उपासना करता है), तो उसके गुण उसमें आते हैं तथा उससे दूर होते ही वे गुण समाप्त हो जाते हैं। इसलिये जीव परमात्मा के समान स्वभाव से आनन्द युक्त नहीं है। इसलिये जीवात्मा–परमात्मा का भौतिक अंश न होकर आंशिक रूप से उसके समान चेतन गुणवाला है। उससे एक गुण जीवात्मा में न्यून (कम) है। परमात्मा में सत् चित् आनन्द है, जीवात्मा में सत् और चित् है। जीवात्मा को आनन्द या सुख दूसरों से प्राप्त होता है, वह इसके लिये दिन रात प्रयत्नशील रहता है, यह गुण इसमें नहीं है, इसलिये वह इसको प्राप्त करने का यत्न करता है। यही 'ममैवांशः' का अर्थ युक्ति युक्त प्रतीत होता है।

अध्याय के अन्त में श्रीकृष्ण अर्जुन से कहते हैं कि "हे निष्पाप अर्जुन! यह गुह्य से गुह्य शास्त्र 'ज्ञान' मैंने तुझे बताया है, इसको जानने के बाद मनुष्य ज्ञानी बन जाता है और कृतकृत्य हो जाता है। शास्त्रीय ज्ञान यही है कि मनुष्य ईश्वर, जीव, प्रकृति के बारे में तथा इनके गुणों के बारे में जानकारी लेवे। यही इस अध्याय में वर्णन किया गया है। ❁❁❁

thearyasamaj.org

गतांक से आगे–

इस्लाम कैसे फैला

लेखकः– प्रीतम अमृतसरी

खुसरो खान (लेखकः इब्न बतोतः)

कुतुबुद्दीन के बड़े अमीरों में से खुसरोखान भी एक था। वह अत्यन्त सुन्दराकृति तथा वीर पुरुष था। उसी ने चन्देरी तथा मालाबार के प्रान्तों पर विजय लाभ किया था। अतः कुतुबुद्दीन उससे विशेष प्रेम रखता था। अन्ततः यही विशेषासक्ति सुल्तान की मृत्यु का कारण बनी। एक दिन खुसरो खान ने सुल्तान से कहा कि कुछ हिन्दु मुसलमान होने वाले हैं............इस देश में यह प्रथा है **कि एक आदमी जब मुसलमान हो जाय, तो उसे बादशाह की हजूरी का शर्फ हासिल हो जाता है जो कि उसे बढ़िया पोशाक, सोने का हार (गले के वास्ते) तथा सुवर्ण के कंगन देता है।** (इन प्रलोभनों में फँसकर ही बहुत से भीरू हिन्दू पतित हो रहे।)

हबीबुस्सियूयर (लेखकः खोन्द मीर)

सुल्तान महमूद ने काफिरों के विरुद्ध चढ़ाई करके 'दीनि मुतीन' की पताकाएँ लहराईं, काफिरों का मूलोच्छेदन किया।

जब 'अमीनुल्मिल्लित यमीनुद्दौला' महमूद गजनवी ने कड़े परिश्रम के अनन्तर कुछ विश्राम कर लिया तो फिर से उसके मन में विचार तरंग उठी कि चलो **दिनि मुहम्मदी को मजबूत करने** की खातिर हिन्दस्तानी काफिरों पर चढ़ाई करें। सब धावा बोल दिया गया। **405 हिजरी में फिर काफिरों के साथ लड़ाई करने को** सुलतान महमूद ने भारत वर्ष पर आक्रमण किया। बहुत से मुशरिकों को तलवार के घाट उतारा, उनका धन सम्पत्ति लूटी और वापस गजनी को लौट गया।

फरिश्तः तथा निजामुद्दीन अहमद कहते हैं कि एक यज्ञ सोम की मूर्त्ति भी महमूद ने देखी। राजा जयपाल ने 40 हस्ती पुरस्कार रूप में प्रस्तुत किये कि किसी प्रकार से उक्त देव मूर्त्ति न तोड़ी जाय, परन्तु वहां कौन सुनता था? **महमूद ने उसे तुड़वा ही दिया और उसके भगनांश गजनी प्रासाद द्वार पर पाँव के नीचे कुचले जाने के निमित्त भेज दिये गये।**

सन् 409 हिजरी की बसन्त में महमूद ने पुनः काफिरों के विरुद्ध चढ़ाई करने का विचार किया। इस बार उसकी सेना में 20 सहस्र ऐसे मुसलमान **भर्ती किये गये जिन्हें केवल मात्र काफिरों के साथ युद्ध**

thearyasamaj.org

करके स्वर्ग प्राप्ति की आकाँक्षा थी। यह दल कन्नौज की ओर बढ़ा। राह में एक बहादुर राजा का दृढ़ दुर्ग था, **परन्तु जब उसने इस्लाम की सेना का दल बल देखा तो उसके रोअब में आकर (भयभीत होकर) बाहर निकल आया और मुसलमान हो गया।** आगे जाकर कन्नौज में डेरे डाले गये, **जहां के बड़े–बड़े मन्दिरों तथा सोने, चांदी की देव मूर्त्तियों को तोड़, धन सम्पत्ति लूट, मन्दिरों और महलों को राख का ढेर बना मुहम्मदी सेना चलती बनी फिर कन्नौज के 7 बड़े–2 दुर्गों पर विजय प्राप्त करके असंख्य हिन्दुओं को लौण्डी गुलाम बना लिया गया। यह संख्या इतनी बढ़ी कि गजनी में एक गुलाम का मूल्य केवल दिर्म तक पहुँच गया।**

सन् 416 हि0 में महमूद 30 सहस्र योद्धाओं तथा अगणित मजहबी (दीवानों) को, जोकि काफिरों को कतल करने से ही स्वर्गवासी होने के आकांक्षी थे साथ ले सोमनाथ पर चढ़ आया। वहां 50 सहस्र काफिर हिन्दु कतल किये गये और 2000 x1000 दीनार का माल हाथ आया।

तोजकि बाबरी (बाबर बादशाह की स्वलिखित जीवनी)

राणा सांगा एक अत्यन्त वीर सेनापति था। उसने अपने बाहुबल की सहायता से बहुत सा देश अपने कब्जे में कर लिया। चित्तौड़ उसकी राजधानी है। उसके राज्य में रणथम्भोर, सारंगपुर, भेलसाँ तथा चन्देरी विशेषता वर्णनीय स्थान हैं। ईश्वर की करुणा से मैंने चन्देरी को फतह कर लिया। **वहां के तमाम काफिरों को कत्ल किया और उनके मन्दिरों तथा महलों को मस्जिदों में परिवर्त्तित किया।**

तवारीखि दाऊदी (लेखक: अब्दुल्लाह)

सुल्तान सिकन्दर लोधी का नाम सिंहासन पर बैठने से पूर्व शहजादा निजामखान था। वह ऐसा सुन्दर था कि जो भी उसे देख लेता था मोहित हो जाता था। एक दिन शहजादा अपने प्राईवेट कमरे में बैठा था कि शेख अब्बुलाला के पुत्र शेख हसन के हृदय में विरह ज्वाला ने प्रदीप्त होकर उसके दर्शन की पिपासा उत्पन्न कर दी क्योंकि **शेख साहिब शाहजादा पर मर रहे थे।'** आज्ञा पूछे बगैर ही वह अन्दर चला गया। राजपुत्र ने पूछा कि द्वारपालों के होते हुए भी तुम कैसे अन्दर आ घुसे हो तो शेख साहिब ने कहा कि आप जानते हो मैं कैसे और क्यों अन्दर आया हूँ। शहजादा बोला 'अच्छा तुम अपने आप को मेरा आशिक' तसव्वुर करते हो।' शेख साहिब ने उत्तर दिया यह मेरे बस की बात नहीं मैं विवश हूँ।' शहजादे ने कहा की आगे आओ। जब वह आगे बढ़ा तो शहजादा ने उसे गर्दन से पकड़ लिया और पास ही एक आग की अंगीठी में डालने के लिये आगे को धकेला। परन्तु शेख साहिब ने फिर भी प्रेमवश अपने बचाओ का प्रयत्न नहीं किया। इतने में मुबारिक खान लोहानी आ गया। सब हाल पूछकर शहजादा से

thearyasamaj.org

बोला 'खुदा से डरो और धन्यवाद करो कि शेख साहिब को कोई शारीरिक हानि नहीं हुई अन्यथा तुम पर ईश्वरी क्रोध का प्रादुर्भाव हो जाता। धन्यवाद करो प्रभु का ऐसा पवित्र व्यक्ति तुम पर आशिक है।'' (खूब रहे पवित्रता इसे ही कहते हैं।)

उक्त शहजादा के राज्याभिषेक से पूर्व जब असंख्य हिन्दू कुरुक्षेत्र में एकत्रित हुए तो उसने इच्छा प्रकट की कि वह वहां जाय और **काफिरों का संहार करे। उसके दरबारियों में से एक ने मना किया तो वह बोला 'पहले तुम्हारा ही काम तमाम करता हूं तुम काफिरों के पक्षपाती हो।** ....वह पक्का मुसलमान और जोशीला आदमी था **उसने काफिरों के कई पूजा स्थान गिराये उसने 'कुफरस्थान' मथुरा के बड़े–2 मन्दिरों को मिस्मार करके उनके स्थान पर सराय तथा स्कूल बनवाये। उसने मूर्त्तियों को तोड़ा और वे पत्थर के टुकड़े बूचड़ों को दे दिये ताकि उनके साथ माँस तोला करें। मथुरा निवासी तमाम हिन्दुओं को डाढ़ी तथा मूँछ मुंडवाने से 'हुकमन्' बन्द कर दिया। इस प्रकार काफिरों की समस्त रीति नीतियों को रोक दिया। यदि कोई हिन्दू हजामत बनवाना चाहता भी तो उसे कोई नाई न मिल सकता। उसका इस शासन प्रणाली से सारे का सारा नगर ही इस्लामी रसमो रिवाज का पाबन्द प्रतीत होने लगा।**

अकबर शाही में लिखा है कि कनीर ग्राम के ब्राह्मण लोधान नामी ने मुसलमानों के समक्ष यह कहा कि हिन्दू तथा मुसलमान दोनों ही मजहब सच्चे हैं। इतनी बात का चारों ओर शोर मच गया। लखनौती से काजी प्यारा तथा शेख बदर ले फतवे दिये; परन्तु दोनों एक दूसरे से विभिन्न थे। अतः यह मुकद्दमा सुल्तान सिकन्दर लोधी के समक्ष रक्खा गया उसे मजहबी वाद विवाद में अतीव आनन्द प्राप्त होता था; अतः उसने उलमा को निमंत्रित किया। मुल्लां अब्दुल्ला, सैयद मुहम्मद, मियां कावन आदि देहली से आये। देश देशान्तरों से अन्य बुलाने की व्यवस्था देने को आहुत हुए। विचारानन्तर निश्चय हुआ कि '**ब्राह्मण को कैद करके उसे मुसलमान बना लिया जाय, और यदि इन्कार करे तो कत्ल कर दिया जाय।' परन्तु क्योंकि ब्राह्मण ने धर्म से च्युत होना स्वीकार न किया अतः उसे कत्ल कर दिया गया।**

सुलतान ने ख्वास खान को किला धौलपुर पर चढ़ाई करने को भेजा। किला ले लिया गया। सुलतान सिकन्दर लोधी ने एक मास वहां निवास किया। **एक मन्दिर के स्थान पर मस्जिद बनवाकर** आगरे चला गया।

वर्षा ऋतु आगरे में बिताकर थोड़े से समय में उसने ग्वालियर का बहुत सा इलाका ले लिया **और मन्दिरों के स्थान में मस्जिदें बनवाकर** वह वापस आगरे चला गया।

सुलतान ने जलाल खान (?) की शक्ति को बरबाद करने का संकल्प कर लिया। पानी तथा खाद्य पदार्थों के अभाव के कारण जलालखान के आदमियों ने (जो हिन्दू ही होंगे) इताअत कुबूल करली। सुलतान ने उनके मन्दिरों को गिराकर उनके स्थान पर मस्जिदें बनवाईं।

औरंगजेब नामा (द्वितीय भाग)

दीनदार बादशाह को सूचना प्राप्त हुई कि ठठे मुलतान के सूबों में और विशेषता बनारस में

thearyasamaj.org

ब्राह्मण लोग पाठशालायें खोलकर अपनी पुस्तकें पढ़ाते हैं। उसे यह भी पता लगा कि हिन्दु तथा मुसलमान विद्यार्थी दूर-दूर से विद्या ग्रहण करने के लिये उनके पास आते हैं। इस पर समस्त सूबों के नाजिमों को हुकम लिखे गये **कि उनके मन्दिर तथा पाठशालायें गिरा देवें, और इस बात की पूरी-2 ताकीद की गई कि ऐसे तमाम स्थानों पर पढ़ने पढ़ाने की रस्म मिटा दें।**

काफिरों का रईस गोकला जाट जिसने सादाबाद के परगने को लूटा था हुसैन अली खां के हाथों पकड़ा गया। खान ने उसे और उसके साथी उदयसिंह को शैख रहिउद्दीन के साथ बादशाह के पास भेजा। शाही हुकम से कोतवाली चबूतरे में दोनों के टुकड़े किये गये। **गोकला का पुत्र तथा पुत्री, शिक्षा प्राप्ति के लिये, जवाहिरखों के सुपुर्द किये गये। लड़की शाह कुली के चेले के साथ विवाही गई, और लड़का पढ़कर कुरआन का हाफिज बना।**

मथुरा में जो केशोराव का सुविख्यात डेरा था, मुहम्मद पैगम्बर के दीन को जिन्दा रखने वाले बादशाह ने उसके गिराने का हुकम दे दिया। कार्यकर्त्ताओं ने थोड़े दिनों में ही उसकी नीवों को उखाड़ कर उसके स्थान पर एक बड़ी मस्जिद खड़ी कर दी। यह मन्दिर नरसिंहदेव बुन्देले का बनाया हुआ था, जिसने जहाँगीर बादशाह के तख्त पर बैठने से पहले, शेख अब्बुल फजल को मार कर, अपना प्रभाव उनके (बादशाह) दिल पर जमा लिया था, क्योंकि वह शेख से नाराज थे। बादशाह बनने के पीछे इसी सेवा के पुरस्कार रूप में इस देव मन्दिर के बनाने की अनुमति लेकर इस पर **33 लाख रुपया** लगाया था। **खुदा का शुकर है कि इस जमाने में यह न होने वाला काम हुआ, कि जिससे दीन की कुव्वत बढ़कर बड़े-2 घमण्डी राजाओं का दम खुश्क हो गया। छोटी बड़ी जड़ाऊ मूर्त्तियां लाकर अकबर आबाद में कुदसिया बेगम के महल की सीढ़ियों के नीचे गड़वा दी गईं। मथुरा का नाम दफ्तरों में इस्लामाबाद लिखा जाने लगा।**

बादशाह ने यह सुनकर कि हुसैन अली खां ने **बेदीनों के मारने, घर लूटने, तथा गढ़ियों के गिराने में कोई कसर नहीं छोड़ी, और कि उसने शाह मुहम्मद पनवार, सैयद शेख रजीउद्दीन, लाल मुहम्मद तथा नजर मुहम्मद आदि को यहां की जिम्मेदारी सौंप दी है, उसे हजूर में बुलाया गया और जब वह ज्येष्ठ बदी द्वादशी (6 मई) को आया तो उसे इन कारनामों के लिये शाबाश दी गई।**

❀❀❀

पाठकों से निवेदन

'तपोभूमि' मासिक पत्रिका के पाठकों से निवेदन है कि वर्ष 2014 का वार्षिक शुल्क 150/- एक सौ पचास रुपये शीघ्र ही **'सत्य प्रकाशन'** के पते पर तपोभूमि कार्यालय को भेजकर जमा करायें ताकि पत्रिका सुचारू रूप से आपको प्राप्त होती रहे।

-व्यवस्थापक

thearyasamaj.org

योग के साधकों को आश्वासन

लेखकः प्रो० उमाकान्त उपाध्याय

महर्षि पतंजलि ने अपने योगदर्शन में योग के आठ अंग बताये हैं-(1) यम (2) नियम (3) आसन (4) प्राणायाम (5) प्रत्याहार (6) धारणा (7) ध्यान (समाधि।)। इनमें प्रथम के चार यम, नियम, आसन और प्राणायाम बहिरंग योग कहलाते हैं। अन्त के चार प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि अन्तरंग योग हैं।

"**तत्राहिंसासत्यास्तेयब्रह्मचर्यापरिग्रहा यमाः।।**" -यह योगदर्शन का वचन है।

अर्थात् (अहिंसा) वैरत्याग,, (सत्य) सत्य ही मानना, सत्य ही बोलना और सत्य ही करना, (अस्तेय) अर्थात् मन, कर्म, वचन से चोरी त्याग, (ब्रह्मचर्य) अर्थात् उपस्थोन्द्रिय का संयम, (अपरिग्रह) अत्यन्त लोलुपता, स्वत्वाभिमानरहित होना, इन पांच नियमों का सेवन सदा करें।

नियम-

"**शौच सन्तोष तपः स्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि नियमाः।**" -यह योगशास्त्र का वचन है।

(शौच) अर्थात् स्नानादि से पवित्रता, (सन्तोष) सम्यक् प्रसन्न होकर निरुद्यम रहना सन्तोष नहीं, किन्तु पुरुषार्थ जितना हो सके उतना करना, हानि-लाभ में हर्ष व शोक न करना, (तपः) अर्थात् कष्टसेवन से भी धर्मयुक्त कर्मों का अनुष्ठान, (स्वाध्याय) पढ़ना-पढ़ाना, (ईश्वरप्रणिधान) ईश्वर की भक्तिविशेष से आत्मा को अर्पित रखना, ये पांच नियम कहाते हैं।

यमों के बिना केवल इन नियमों का सेवन न करें, किन्तु इन दोनों का सेवन किया करे। जो यमों का सेवन छोड़ के, केवल नियमों का सेवन करता है, वह उन्नति को प्राप्त नहीं होता, किन्तु अधोगति अर्थात् संसार में गिरा रहता है।

इस तथ्य के समर्थन में निम्नलिखित मनुस्मृति का श्लोक देखने योग्य है-

"**यमान् सेवेत सततं न नियमान् केवलान् बुधः।**
यमान्पतत्यकर्वाणो नियमान् केवलान् भजन्।। -मनु0 4।204

यम और नियम जीवन जीने के महत्वपूर्ण अंग हैं, इनके अभाव में योग की साधना असम्भव है। यहाँ एक और सच्चाई ध्यान में रखनी चाहिये कि सदाचारी गृहस्थ भी योग की साधना आराम से कर सकता है।

योग का तीसरा अंग है आसन। योगदर्शन का सूत्र है-

"स्थिरसुखमासनम्" योगसाधना के लिये लम्बे समय तक स्थिर होकर सुखपूर्वक बैठना। योग-

thearyasamaj.org

साधना के लिये मुख्य रूप से सिद्धासन, पदमासन व, सुखासन बताये जाते हैं। आसन के सम्बन्ध में मुख्य बात यह है कि दोनों पुटठे समान रूप से आसन पर स्थित हों, कमर में जहाँ त्रिकास्थि है वहाँ से मेरूदण्ड गर्दन तक सीधा रहे। इससे इडा, पिंगला और सुषुम्णा तीनों नाड़ियाँ खुली रहें और प्राणों का आवागमन होता रहे। साधना के लिये इतना ही आसन पर्याप्त है।

योग का चतुर्थ अंग है प्राणायाम। प्राणायाम में प्राणों को श्वास से दोनों नथुनों से बाहर निकालकर रोकना वायु और मूल को संकुचित करना लाभकारी है। अधिक देर बाह्यवृत्ति अर्थात् बाहर रोकना उत्तम है। स्वाभाविक रूप से श्वास अन्दर लेकर थोड़ा रोककर फिर बाहर रोकना मूल पायु का संकोच करना लाभकारी है। इससे इडा, पिंगला और सुषुम्णा तीनों खुलकर सक्रिय हो जाती हैं और साधना में सहयोग मिलता है।

यम, नियम, आसन और प्राणायाम, ये चारों बहिरंग है। प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि ये चारों अन्तरंग योग हैं। प्रत्याहार का अर्थ है कि ज्ञान इन्द्रियों को वाह्य विषयों से अन्तर्मुखी करके परमेश्वर में ध्यान लगाना। भगवान ने आँख, कान, नाक आदि ज्ञान इन्द्रियों को बहिर्मुखी बनाया है, इसीलिये वे बाहर के विषयों को आसानी से ग्रहण कर लेती है। उन्हें अन्तर्मुखी करके परमेश्वर के गुण, चिन्तन में लगाना प्रत्याहार हैं, इसीलिये योगसाधना के समय आँखें अधखुली बन्द कर लेते हैं। कई लोग कानों से रूई का फूहा भी लगा लेते हैं। इससे बाहर के दृश्य, शब्द आदि नहीं सुनायी पड़ते। अन्तरंग योग का द्वितीय साधन ''धारणा'' है। धारणा की परिभाषा है–**''देशबन्धचितस्यधारणा।''** चित्त को किसी एक स्थान पर बांध देना। कईं लोग दीपक की लौ पर भी धारणा करते हैं। किन्तु परमेश्वर की धारणा के लिये हृदय पुण्डरीक–दोनों छातियों के बीच में खाली जगह पर, नासिकाग्र दोनों भौहों के बीच में आज्ञा चक्र पर (जहाँ पिट्यूटरी ग्लैण्ड्स) और सिर में सहस्रार (जहाँ खोपड़ी में पिलपिला है) उत्तम स्थान है।

इसके पश्चात् ध्यान का क्रम आता है। योगदर्शन में कहा है–''तत्रैयिकतानता ध्यानम्।'' धारणा को एकरस बनाये रखना, कोई विच्छेद न होने देना ध्यान है। ध्यान में परमेश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव का निरन्तर चिन्तन करते रहना उचित है। इसका पूर्ण अभ्यास हो जाने पर समाधि लग जाती है। समाधि में सब कुछ भूल जाता है। ध्यान करने वाला अपने को भूल जाता है, मैं ध्यान कर रहा हूँ यह भी भूल जाता है। केवल परमेश्वर का चिन्तन मात्र ही ध्यान में रह जाता है। समाधि भी सम्प्रज्ञात और असम्प्रज्ञात दो तरह की होती है। इस समय समाधि के इन दोनों भेदों को अब छोड़ रहे हैं, यह साधना का ऊँचा विषय है। योग साधना में समाधि तक पहुँचना अनेक जन्मों में सिद्ध हो पाता है।

अर्जुन ने श्रीकृष्ण से गीता में पूछा है यदि कोई मनुष्य योग साधना करता–करता भटक जाये तो उसकी क्या गति होती है–

''अयतिः श्रद्धयोपेतो योगाच्चलितमानसः।
अप्राप्य योगसंसिद्धिं कां गतिं कृष्ण गच्छति।।'' गीता0 6। 37

अर्जुन बोले–हे श्रीकृष्ण! जो योग में श्रद्धा रखनेवाला है, किन्तु संयमी नहीं है, इस कारण

thearyasamaj.org

जिसका मन अन्तकाल में योग से विचलित हो गया है, ऐसा साधक योग की सिद्धि को अर्थात् भगवत्साक्षात्कार को न प्राप्त होकर किस गति को प्राप्त होता है?

श्रीकृष्ण जी उत्तर देते हैं कि योग का मार्ग कल्याण का मार्ग है। योग के मार्ग में चलने वाले की कभी दुर्गति नहीं होती। गीता में श्रीकृष्ण के आश्वासन ध्यान देने योग्य हैं–

"पार्थ नैवेह नामुत्र विनाशस्तस्य विद्यते।
न हि कल्याणकृत्कश्चिद् दुर्गतिं तात गच्छति।।" गीता0 6। 40

श्रीभगवान् बोले–हे पार्थ! उस पुरुष का न तो इस लोक में नाश होता है और न परलोक में ही। क्योंकि हे प्यारे आत्मोद्धार के लिये अर्थात् भगवत्प्राप्ति के लिये कर्म करने वाला कोई भी मनुष्य दुर्गति को प्राप्त नहीं होता।

"प्राप्य पुण्यकृतां लोकानुषित्वा शाश्वतीः समाः।
शुचीनां श्रीमतां गेहे योग भ्रष्टोऽभिजायते।।" –गीता0 6। 41

योगभ्रष्ट पुरुष पुण्यवानों के लोकों को अर्थात् स्वर्गादि उत्तम लोकों को प्राप्त होकर, उनमें बहुत वर्षों तक निवास करके फिर शुद्ध आचरण वाले श्रीमान् पुरुषों के घर में जन्म लेता है।

अथवा वैराग्यवान पुरुष उन लोकों में न जाकर ज्ञानवान् योगियों के ही कुल में जन्म लेता है। परन्तु इस प्रकार का जो यह जन्म है, सो संसार में निःसन्देह अत्यन्त दुर्लभ है।

"तत्र तं बुद्धिसंयोगं लभते पौर्वदेहिकम्।
यतते च ततो भूयः संसिद्धौ कुरुनन्दन।।" –गीता0 6। 43

वहाँ उस पहले शरीर में संग्रह किये हुए बुद्धि–संयोग को अर्थात् समबुद्धिरूप योग के संस्कारों को अनायास ही प्राप्त हो जाता है और हे कुरुनन्दन! उसके प्रभाव से वह फिर परमात्मा की प्रतिरूप सिद्धि के लिये पहले से भी बढ़कर प्रयत्न करता है।

"पूर्वाभ्यासेन तेनैव ह्रियते ह्यवशोऽपि सः।
जिज्ञासुरपि योगस्य शब्दब्रह्मातिवर्तते।।" –गीता0 6। 44

वह श्रीमानों के घर में जन्म लेनेवाला योगभ्रष्ट पराधीन हुआ भी उस पहले के अभ्यास से ही निःसन्देह भगवान् की ओर आकर्षित किया जाता है, तथा समबुद्धिरूप योग का जिज्ञासु भी वेद में कहे हुए सकाम कर्मों के फल को उल्लंघन कर जाता है।

"प्रयत्नाद्यतमानस्तु योगी संशुद्धकिल्बिषः।
अनेक जन्मसंसिद्धस्ततो याति परां गतिम्।।" –गीता0 6। 45

परन्तु प्रत्यनपूर्वक अभ्यास करनेवाला योगी तो पिछले अनेक जन्मों के संस्कार बल से इसी जन्म में संसिद्ध होकर सम्पूर्ण पापों से रहित हो फिर तत्काल ही परमगति को प्राप्त हो जाता है।

इस सबका यही आशय है कि मनुष्य को जहाँ तक सुयोग सुविधा मिले, शरीर साथ दे, परमेश्वर के साक्षात्कार के लिये योगसाधना अवश्य करते रहना चाहिये। ❁❁❁

thearyasamaj.org

"आर्यवीर दल की स्थापना तथा उसके कार्यों का इतिहास"

लेखकः खुशहालचन्द्र आर्य, 180 महात्मा गाँधी रोड (दो तल्ला), कोलकत्ता मोबा. 9830135794

यह लेख मैंने स्वामी देवव्रत जी (प्रधान संचालक सार्वदेशिक आर्यवीरदल) की पुस्तक "सार्वदेशिक आर्य वीर दल" शीर्षक से यह जानकर उद्धृत किया है कि सार्वदेशिक आर्यवीरदल आर्यसमाज एक सेवाभावी सैनिक संगठन है। इसकी स्थापना व कार्यों की जानकारी प्रत्येक आर्यसमाजी को होनी चाहिए। इस उद्देश्य से यह लेख लिखा है, जो इसी भांति है।

धर्मान्ध लोगों द्वारा हमारे नेताओं के बलिदान किये जाने पर उनका प्रतिकार करने के लिए सन् 1927 ई0 में महात्मा हंसराज की अध्यक्षता में दिल्ली में एक विराट महासम्मेलन हुआ। जिसके परिणामस्वरूप 26 जनवरी सन् 1929 ई0 को आर्य-रक्षा समिति के सदृढ़ अंग के रूप में आर्य वीरदल की स्थापना हुई। उस समिति के अध्यक्ष महात्मा नारायण स्वामी ने दस हजार आर्य वीर और दस सहस्र रुपये एक वर्ष में एकत्रित करने की प्रतिज्ञा की। आर्यों में इतना अधिक उत्साह था कि कुछ ही मासों में ये दोनों प्रतिज्ञाएँ पूरी हो गईं।

इसी मध्य महाराज राजपाल का लाहौर में धर्मान्ध लोगों द्वारा वध कर दिया गया। इन्हीं परिस्थितियों में महात्मा नारायण स्वामी की अध्यक्षता में सन् 1931 ई0 में दूसरे आर्य महासम्मेलन का आयोजन किया गया जिसमें आर्यवीर-दल की शाखा प्रत्येक प्रान्त, नगर और आर्यसमाजों में स्थापित करने का आदेश किया गया जिसमें आर्यवीर-दल के नियमित संचालन के लिए बलिष्ट आर्यवीरों को अन्य स्थानों पर प्रशिक्षण के लिए भेजा गया। सर्वत्र छात्र धर्म का प्रचार-प्रसार होने से आर्य नेताओं पर होने वाले आक्रमण रूक गये। सिंहों की दहाड़ सुनकर गीदड़ माँदों में जा छिपे। हिन्दू एवं आर्यजनों के उत्सव, मेले, शोभायात्रा निर्विघ्न सम्पन्न होने लगे।

सारे देश में स्वंत्रता-संग्राम का बिगुल बजा हुआ था। **"करो या मरो"** महात्मा गांधी के इस उद्घोष से देश के नवयुवकों का खून खौल उठा। विदेशी वस्त्रों की होली जलाना, रेल की पटरियों को उखाड़ना, टेलीफोन के खम्बों को उखाड़ना और डाकखाने तथा सरकारी कार्यालयों को अग्नि के अर्पण करना आदि का अभियान सर्वत्र जो पकड़ गया। ऐसे अवसर पर आर्यवीर कब चुप बैठने वाले थे। शिविर समाप्त होने पर बहुत से आर्यवीर इस संग्राम में कूद पड़े। तब से लेकर हैदराबाद रियासत के भारत में विलय होने तक का इतिहास आर्यवीरों के त्याग, बलिदान एवं शौर्य से भरा पड़ा है। धीरे-धीरे पेशावर जम्मू, कोहाट में कलकत्ता तक आर्यवीर दल का जाल-सा बिछ गया। इसके कार्यों को दो भागों में बाँटा जा सकता है।

1- सुरक्षाः- दिल्ली आर्यवीर-दल ने सन् 1927 ई0 या इसके आस-पास मुस्लिम गुण्डों से हिन्दुओं की रक्षा, गढ़मुक्तेश्वर तथा यमुना के घाटों पर, मेलों के अवसर पर जनता की सेवा, सहायता और सुरक्षा

thearyasamaj.org

का प्रशंसनीय कार्य किया जिससे इसकी उपयोगिता सभी को प्रतीत हो गई।

सन् 1946 ई0 में पश्चिमी पंजाब में हजारा, रावलपिंडी तथा जेहलम जिलों में, जहाँ पर मुस्लिम संख्या अधिक थी, हिन्दुओं पर भयानक अत्याचार हुए। सैकड़ों स्त्रियों ने अपने सतीत्व की रक्षा के लिए कूओं में छलांग लगाई। सैकड़ों युवक वीरतापूर्वक लड़ते हुए शहीद हुए। उस समय रावलपिंडी, नौशेरा तथा अन्य स्थानों के आर्य-वीरों ने अपनी जान पर खेलकर हिन्दुओं की रक्षा व सेवा की।

भारत की स्वाधीनता से पूर्व ही सीमा प्रान्त की हिन्दू-जनता को जीवन-मरण के संघर्ष से गुजरना पड़ा। पूर्वी बंगाल के नोआखली जिले में सोहरावर्दी के संकेत से मुस्लिम गुंडे बंगाल के हिन्दुओं का निर्मम संहार कर रहे थे। सार्वदेशिक सभा द्वारा आदेश मिला कि 200 मौतों से खेलने वाले आर्यवीरों का दल पूर्वी बंगाल भेजा जाए। अलवर के दल को सैनिक भेजने का आदेश हुआ। सभा प्रधान के सामने एक सहस्र आर्यवीर खड़े कर दिये गये कि इनमें किन्हीं 200 का चयन कर लें। प्रत्येक आर्यवीर जाने के लिए आग्रह कर रहा था। श्री ओमप्रकाश जी त्यागी के नेतृत्व में आर्यवीर नोआखली के लिए रवाना हुए। वहाँ जाकर रेलवे स्टेशन से उतरकर प्रभावित क्षेत्र में अपना शिविर लगाने से पूर्व बम विस्फोट किया। गुण्डों को यह समझते देर न लगी कि यह घटना कुछ और संकेत कर रही है। उनकी हिम्मत उधर देखने की भी नहीं हुई।

पास में श्रीमती सुचेता कृपलानी के नेतृत्व में कांग्रेस का शिविर लगा हुआ था। इसके कार्यकर्त्ता अहिंसा का मिथ्या राग अलापते और आर्यवीर दल को गालियां देते थकते न थे। एक दिन मुस्लिम गुण्डों ने कांग्रेस शिविर पर धावा बोल दिया और सुचेता जी के बालों को पकड़कर घसीटते हुए अपने क्षेत्र की ओर ले जाने लगे। सूचना पाकरर आर्यवीर दल के सेनापति श्री ओमप्रकाश जी सशस्त्र आर्यवीरों के साथ गुण्डों पर टूट पड़े और उनका सारा नशा झाड़ दिया। सुचेता जी खुले बाल धूललिप्त, भूमि पर पड़ी थी। श्री ओमप्रकाश जी को सामने खड़ा देख आँखों में पानी भरकर बोली, "भैया! तुम आ गये।" प्रत्युत्तर में इन्होंने कहा कि गुण्डों द्वारा बहन का अपमान होता देखकर महर्षि दयानन्द के सैनिक कैसे चुप रह सकते हैं? ऐसे ही अनेक अवसरों पर अपनी जान हथेली पर रखकर आर्यवीरों ने न जाने कितनी माताओं-बहिनों की जान बचाई।

पूर्वी बंगाल से आये हिन्दू-शरणार्थियों का शिविर सीमा के पास लगा हुआ था। पाकिस्तान की सीमा केवल 100 मीटर दूर थी। यहाँ पाकिस्तानी अंसार गुण्डों से अनेक बार आर्यवीरों की झड़पें हुईं और उन्हें पीछे धकेल दिया गया। ऐसी ही घटना जयनगर के समीप हुई। पाकिस्तान की सीमा को पार करके अंसार गुण्डों ने भारतीय चौकी पर आक्रमण करके अपना झण्डा गाड़ने का प्रयास किया। इस समय शिविर में भारतीय पुलिस के केवल चार सिपाही थे जिनमें से एक रोगी था। श्री ओमप्रकाश जी सेनापति आर्यवीर दल, उस शिविर को संभाल रहे थे। दोनों ओर से कुछ घण्टों तक गोलियाँ चलीं। अपनी दाल गलती न देखकर अंसार गुण्डे मैदान छोड़कर भाग खड़े हुए। उनसे छीना पाकिस्तानी झण्डा अब भी आर्यवीर-दल के शौर्य की याद दिला रहा है।

हैदराबाद के मुक्ति-संग्राम का प्रारम्भ तो आर्यवीरों ने ही किया था। तीन आर्यवीरों ने निजाम

thearyasamaj.org

की कार पर बम फेंकने की योजना बनाई। योजनानुसार बम फेंका गया, परन्तु वह फटा नहीं, इससे पहले कि दूसरी कार्यवाही की जाए निजाम के अंगरक्षकों ने नारायणराव को दबोच लिया। उसे भयंकर यातनाएँ दी गईं, परन्तु उसने साथियों के नाम नहीं बतलाए।

उमरी कस्बे में हैदराबाद के निजाम का बैंक था। आर्यवीरों ने योजनाबद्ध विधि से उसमें से 30 लाख रुपये लूटकर सरदार पटेल के सुपुर्द कर दिये। इसी भाँति उद्‌गीर के भाई श्यामलाल धारूर, जिला बीड़ के नवयुवक काशीराम, हुमनाबाद के शहीद वेदप्रकाश, श्रीकृष्ण राव जी ईंटिकर और अन्य बहुत से आर्यवीरों ने स्वतंत्रता की रक्षा के लिए अपने जीवन की आहुतियाँ देकर हैदराबाद को मुक्त कराने का श्रेय प्राप्त किया। हैदराबाद में पुलिस एक्शन के समय सारा कार्य चार आर्योंवीरों पर ही था। इसलिए सरदार पटेल को कहना पड़ा कि यदि आर्यसमाज का सहयोग न होता तो सरकार को हैदराबाद को विजय करना कठिनतम होता। वस्तुतः इस रियासत की विजय का सम्पूर्ण श्रेय आर्यवीरों को ही जाता है।

2– सेवा कार्यः– सेवा कार्य वही कर सकता है जो शरीर से बलिष्ट तथा अहंकार से शून्य और मानवीय गुणों से युक्त हो। आर्यवीर इस कार्य में भी पीछे नहीं रहे। कुछ प्रसंग इसके ज्वलन्त उदाहरण हैं। सन् 1936 ई0 में मध्य भारत में दुर्भिक्ष पड़ा। सार्वदेशिक सभा ने आर्यवीरों के निरीक्षण में रतलाम, उज्जैन, झाबुआ, दोहद व मेघनगर में सहायता केन्द्र खोले। यह कार्य डेढ़ मास तक चला। सन् 1942–43 ई0 में बंगाल में भयंकर अकाल पड़ा, जिसमें 45 लाख लोग मौत के मुख में आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब एवं सार्वदेशिक सभा के तत्वाधान में श्री खुशहालचन्द्र (आनन्द स्वामी) की अध्यक्षता में आर्यवीरों को सहायतार्थ भेजा गया। आर्यवीरों ने लाखों लोगों में भोजन, वस्त्र और औषधि वितरण का कार्य किया। इसी भाँति देश–विभाजन के समय अनेक सहायता शिविरों का संचालन किया। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् 1950 ई0 में असम की बाढ़ केकड़ी (राजस्थान) और मोरवी (गुजरात) के जल प्लावन में भी आर्यवीरों की महत्वपूर्ण भूमिका रही। इसी भांति उत्तरकाशी एवं गुजरात के भूकम्प और उड़ीसा के तूफान में भी आर्यवीरों ने प्रशंसनीय कार्य किया है।

आर्य वीर दल का इतिहास त्याग, बलिदान, देशभक्ति, सेवा और शौर्य गाथा से परिपूर्ण है। जिन्होंने धर्म, एवं राष्ट्र रक्षा के लिए अपना सर्वस्व अर्पण किया। उन परिचित एवं अनाम शहीदों को हमारा शत्–शत् प्रणाम।

मुझे यहाँ बड़े दु:ख के साथ लिखना पड़ रहा है कि आर्यवीरों ने इतना अधिक काम इसलिए कर पाये कि उस समय आर्यसमाज संगठित थी। एक सार्वदेशिक योग्य, त्यागी, तपस्वी, नि:स्वार्थी, परोपकारी, समर्पित आर्यजनों की थी। तभी उस समय आर्यसमाज की धाक थी। सरकार और जनता, आर्यसमाज को सम्मान व श्रद्धा की दृष्टि से देखती थी। आज की भाँति यदि तीन सार्वदेशिकें स्वार्थी और पद–लोलुप जनों की उस समय भी होती तो कोई काम रक्षाा व सेवा का नहीं कर पाती। इसलिये आर्यसमाज को यदि वेदप्रचार व राष्ट्र रक्षा का कार्य करना है तो पुनः संगठित होना पड़ेगा और तीन सार्वदेशिकों की जगह एक सार्वदेशिक अच्छे आर्यजनों की बनानी पड़ेगी। अन्यथा आर्यसमाज अवनति को ही प्राप्त होता रहेगा। ❀❀❀

thearyasamaj.org

दुनिया मानसिक अवस्थाओं की परिछाई है।

लेखकः - बाबू दयाचन्द्र गोयलीय बी0 ए0

जैसे तुम हो, वैसी ही तुम्हारी दुनिया है, तुम दुनिया की प्रत्येक वस्तु को अपने ही आभ्यन्तरिक अनुभव के अनुसार समझते हो। बाह्य में चाहे कुछ भी हो, इसकी कोई परवाह नहीं, कारण कि जो कुछ भी बाह्य में है, वह सब तुम्हारे आन्तरिक ज्ञान की अवस्था का प्रतिरूप है। तुम्हारी आन्तरिक अवस्था पर ही सब कुछ निर्भर है, कारण कि जो कुछ अन्तरंग में होता है, वही बाह्य में शीशे की भाँति झलकने लगता है।

जो कुछ तुम्हें निश्चित रूप से ज्ञात है वह सब तुम्हारा जातीय अनुभव है और जो कुछ भी तुम्हें भविष्य में ज्ञात होगा वह तुम्हारे अनुभव में आएगा और तुम्हारा एक भाग बन जाएगा।

तुम्हारे ही विचार, तुम्हारी इच्छाएँ और उच्च आकांक्षाएँ तुम्हारी दुनिया है और जो कुछ तुम इस दुनिया में हर्ष, आनन्द और सुन्दरता अथवा दुःख, शोक और कुरूपता देखते हो, वह सब तुम्हारे ही मनोगत विचारों का परिणाम है। तुम अपने ही विचारों से अपने जीवन और जगत् को बनाते और बिगाड़ते हो। जैसे तुम्हारे मन में विचार होंगे, वैसा ही तुम्हारा जीवन होगा और वैसी ही तुम्हारी बाह्य अवस्था होगी। जो कुछ भी तुम्हारे हृदय-मंदिर में है, वह कभी न कभी अवश्य ही तुम्हारी बाह्य जीवन में आ जाएगा और तुम्हारा सम्पूर्ण कार्य व्यवहार उसी के अनुसार होगा। जो आत्मा नीच, अपवित्र और स्वार्थी है, वह यथार्थ में दुःख और शोक की ओर जा रही है और जो आत्मा उच्च, पवित्र और निस्स्वार्थ है वह निश्चित रूप से हर्ष और आनन्द की ओर बढ़ी जा रही है। प्रत्येक आत्मा उसी वस्तु को अपनी ओर आकर्षित करती है, जो उसकी होती है। अन्य कोई वस्तु उसके पास नहीं आ सकती। इस बात को जानने और अनुभव करने के लिए ईश्वरीय नियम की सर्व व्यापकता को मानना पड़ता है। जैसे मनुष्य के मानसिक विचार होते हैं, उन्हीं के अनुसार उसके जीवन की घटनाएँ होती हैं जो उसके जीवन को बनाती और बिगाड़ती हैं। प्रत्येक आत्मा में भिन्न-भिन्न प्रकार के अनेक विचार और अनुभव भरे होते हैं और शरीर उनके प्रकाश करने का प्रत्यक्ष साधन होता है। अतएव जैसे तुम्हारे विचार हैं, यथार्थ में वैसे ही तुम स्वयं हो। तुम्हारे चहुँ ओर जो जड़ चेतन संसार फैला हुआ है, वह सब तुम्हारे विचारों के रंग में रंग जाता है अर्थात् तुम्हारे विचारों के अनुकूल ही रूप धारण कर लेता है। महात्मा बुद्ध का कथन है कि जो कुछ हम हैं, वह सब हमारे ही विचारों का परिणाम है। हमारा जीवन हमारे ही विचारों पर स्थित है और हमारे ही विचारों से बना हुआ है। इससे यह नतीजा निकलता है कि यदि कोई मनुष्य सुखी और प्रसन्न है, तो उसका यह कारण है कि वह अच्छे प्रसन्नता के विचारों में मग्न रहता है और यदि कोई मनुष्य दुःखी है तो उसका कारण यह है कि वह दुःख, निराशा और निर्बलता के विचारों में तन्मय रहता है। चाहे कोई मनुष्य भयभीत हो या निर्भय, चाहे मूर्ख हो या बुद्धिमान, चाहे दुःखी हो या सुखी, उसकी प्रत्येक अवस्था का

thearyasamaj.org

कारण उसकी आत्मा में ही विद्यमान है, बाहर कहीं नहीं है। परन्तु यहाँ पर प्रायः लोग यह शंका करेंगे, कि क्या बाह्य अवस्थाओं का हमारे मन और स्वभाव पर कुछ भी असर नहीं पड़ता? इसका उत्तर यह है कि बाह्य अवस्थाएँ तुम पर केवल उतना ही प्रभाव डाल सकती हैं, जितना कि तुम चाहो, अधिक नहीं और इसमें तनिक भी असत्य नहीं है। बाह्यघटनाएँ इस कारण तुम पर अपना अधिकार जमा लेती हैं कि तुम्हें विचार-शक्ति का ठीक-ठीक ज्ञान नहीं है और न तुम उसके उपयोग से ही परिचित हो। तुम्हें विश्वास है और इसी छोटे से शब्द विश्वास पर तुम्हारा सारा सुख दुःख निर्भर है, कि बाह्य अवस्थाओं में तुम्हारे जीवन को बनाने और बिगाड़ने की शक्ति है। इसी विश्वास के कारण तुम बाह्य वस्तुओं के आधीन हो जाते हो, अपने को उनका अनन्य दास समझ लेते हो और उनको अपना सर्वाधिकार सम्पन्न स्वामी। इसी कारण तुम उनको वह शक्ति देते हो, जो उनमें स्वयं नहीं है और यथार्थ में तुम केवल घटनाओं के ही वश में नहीं हो जाते, किन्तु उनके कारण दुःख, सुख, भय, आशा, सबलता, निर्बलता का भी अनुभव करने लगते हो और ये सम्पूर्ण भाव तुम्हारे ही विचारों ने घटनाओं में उत्पन्न कर दिये हैं।

मैं ऐसे दो आदमियों को जानता हूँ कि जिनकी वर्षों के श्रम से कमाई हुई सम्पत्ति उनकी जवानी में ही जाती रही थी। उनमें से एक को तो बड़ी गहरी चोट लगी और वह अत्यन्त दुःखी और निराश हो गया; परन्तु दूसरे आदमी ने जब अखबार में यह देखा कि वह बैंक जिसमें उसका रुपया जमा था, फेल हो गया है और अब उससे एक पैसा भी वसूल नहीं हो सकता है, तो वह बड़ी शांति और धैर्य के साथ कहने लगा कि-'गया सो गया' अब उसके लिए दुःख, और शोक करना व्यर्थ है। ऐसा करने से रुपया नहीं मिल सकता। रुपया केवल कठिन परिश्रम से ही मिलेगा, अतएव वह नए जोश के साथ फिर बड़े श्रम से काम करने लगा और थोड़े ही दिनों में वह ऐश्वर्यवान् हो गया। पहला आदमी धन की हानि पर केवल दुःख और शोक मनाता रहा और अपने भाग्य को दोष देता रहा। इसी कारण वह अपनी बुरी दशाओं का दास बना रहा। अतएव, धन-हानि के कारण एक मनुष्य को तो दुःख हुआ कारण कि उसके मन में नाना प्रकार के कुत्सित विचार उत्पन्न हुए, परन्तु दूसरे को सुख और लाभ हुआ। उसके कारण उसके मन में नवीन शक्ति और आशा का संचार हुआ और उसने बड़े श्रम और उत्साह से काम किया।

यदि घटनाओं में हानि व लाभ पहुँचाने की शक्ति होती तो उनसे समस्त मनुष्यों को समाज लाभ व हानि पहुँचती। परन्तु जब एक ही घटना से एक मनुष्य को तो लाभ और दूसरे को हानि पहुँचती है, तो इससे सिद्ध होता है कि हानि व लाभ उस घटना में नहीं है, किन्तु जिस मनुष्य को उस घटना का सामना करना पड़ता है, उसके मन में है। जब तुम इस बात को अच्छी तरह समझने लगोगे, तो तुम अपने विचारों पर अधिकार पाने लगोगे, अपने मन को साधना और वश में करना तथा अपने आन्तरिक आत्मिक मन्दिर को फिर से बनाना शुरू कर दोगे। तुम इस मन्दिर में से व्यर्थ के कुत्सित विचार निकाल डालोगे और केवल हर्ष और शांति, शक्ति और जीवन, प्रेम और अनुकम्पा, सुन्दरता और नित्यता के विचार भरोगे और जब तुम ऐसा करोगे, तब तुम प्रसन्न और शांत, दृढ़ और स्वस्थ, और प्रेमी और दयालु बन जाओगे।

thearyasamaj.org

जिस प्रकार हम घटनाओं को अपने ही विचारों का लिबास पहिनाते हैं, अर्थात् घटनाओं को अपने ही विचारों के रूप में परिणत करते हैं, उसी प्रकार हम इस संसार में अपने चारों तरफ के पदार्थों को भी अपने विचारों का जामा पहिनाते हैं। जहाँ एक मनुष्य को शांति और सुन्दरता दिखलाई देती है, वहीं दूसरे की अशांति और कुरूपता मालूम होती है। एक दिन एक उत्साही विज्ञानी किसी गाँव की गलियों में अपने इच्छित पदार्थ की जोह में फिर रहा था। फिरते फिरते वह एक खेत के पास एक खारे पानी के तालाब पर जा निकला। जब वह खुर्दबीन से पानी की, परीक्षा करने के लिए अपनी बोतल को पानी से भरने लगा, तो उसने बड़े जोश के साथ एक मूर्ख अशिक्षित किसान के लड़के के सामने, जो उसके पास ही खड़ा था, तालाब के सूक्ष्म और गुप्त आश्चर्यजनक पदार्थों का विस्तारपूर्वक वर्णन किया और बोला, मित्रवर इस तालाब में सैकड़ों ही नहीं किन्तु लाखों तरह के जलजन्तु हैं। क्या ही अच्छा होता, यदि हमारे पास उनके देखने के लिए निर्मल चक्षु होते या कोई यंत्र होता। सीधे सादे किसान के लड़के ने सोचकर उत्तर दिया, कि हाँ, मैं जानता हूँ इस पानी में मेंढक के छोटे-छोटे बच्चे हैं, जिनका पकड़ना बहुत आसान है।

देखिये, जहाँ पदार्थ-विज्ञानी ने जिसका मस्तक प्राकृतिक वस्तुओं के ज्ञान से भरा हुआ था, वैभव और सौन्दर्य का अनुमान किया, वहाँ दूसरे मनुष्य ने जिसके मस्तक में इस भाँति की शिक्षा ने प्रवेश नहीं किया था, कीचड़ में मेंढक के सिवाय और कुछ नहीं देखा।

जंगली फूल जिसको एक चलता हुआ राहगीर सोचे समझे अपने पैरों तले रौंद डालता है, कवि के आध्यात्मिक चक्षु के लिए वही देवदूत के सदृश है जो ईश्वर की ओर से इस संसार में प्रगट हुआ है। समुद्र को बहुत से लोग पानी का एक विशाल और भयंकर विस्तार समझते हैं जिस पर बहुत से जहाज चलते हैं और कभी-कभी नष्ट भी हो जाते हैं, परन्तु किसी गंधर्व से पूछो, उसके लिए वही समुद्र एक जीती जागती वस्तु है और उसकी लहरों में उसे ईश्वरीय गुणों के ताल और स्वर सुनाई पड़ते हैं। जहाँ पर एक साधारण मनुष्य को गड़बड़ी और परेशानी नजर आती है, वहीं पर एक तत्वज्ञानी को कार्य कारण का अविनाभावी सम्बन्ध दिखाई देता है और जहाँ पर नास्तिक और जड़वादी को अनन्त मृत्यु के अतिरिक्त और कुछ नहीं दिखलाई नहीं देता, वहाँ पर ईश्वरवादी को चलती फिरती और अजर अमर आत्मा दिखलाई देती है अर्थात् ईश्वर के अस्तित्व का बोध होता है। जिस प्रकार हम घटनाओं और पदार्थों को अपने विचारों से वेष्टित करते हैं, उसी प्रकार हम दूसरों की आत्माओं को भी अपने विचारों के रूप में परिवर्तित करते हैं। अर्थात् जैसे हम स्वयं हैं दूसरों को भी वैसा ही समझते हैं। जो मनुष्य अविश्वासी होता है, वह संसार भर को अविश्वासी समझता है। झूठा आदमी यह समझ कर अपने जी को बहलाता है कि संसार में एक भी मनुष्य ऐसा नहीं है कि जो बिलकुल सच बोलता हो। ईर्ष्या और डाह रखने वाले मनुष्य सबको अपने समान समझते हैं। कृपण मनुष्य को सदा इस बात का भय लगा रहता है कि कहीं लोग मेरे माल को न छीन लें। जिस आदमी ने रुपया कमाने में अपने ईमान को बेच दिया है वह सदा अपने तकिये के नीचे तमंचा रख कर सोता है और इस धोके में पड़ा ररहता है कि इस दुनिया में बेईमान आदमी भरे हुए हैं, जो उसके धन को उससे जबरदस्ती छीनना चाहते हैं और जो मनुष्य विषय-वासनाओं में लिप्त

thearyasamaj.org

रहते हैं वे साधु महात्माओं को भी ढोंगी और मक्कार समझते हैं। इसके विपरीत जिनके विचार उदार, पवित्र और प्रेमयुक्त हैं, वे दूसरों के साथ प्रेम और सहानुभूति रखना अपना धर्म समझते हैं। सच्चे और ईमानदार आदमियों को कभी शंका या संकोच से दुःख नहीं होता। उदारचरित मनुष्य दूसरों की बढ़ती देखकर प्रसन्न होते हैं और वे जानते भी नहीं कि ईर्ष्या या डाह किसे कहते हैं। जिन लोगों ने अपनी आत्मा में परमात्मा का अनुभव कर लिया है, वे प्राणी मात्र में ईश्वर-दर्शन करते हैं।

समस्त स्त्री पुरुषों को अपने मानसिक विचारों की सत्यता इस बात से पूर्ण रूप से सिद्ध हो जाती है कि कार्य कारण के नियमानुसार वे उन्हीं विचारों को अपनी ओर आकर्षित करते हैं, जिन्हें वे अपने भीतर से निकालते हैं और इसलिए वे अपने ही जैसे विचारवालों से मेल जोल रखते हैं। फारसी में एक कहावत है **"कुनद हमजिन्स बा हमजिन्स परवाज-कबूतर वा कबूतर बाज बा बाज"** अर्थात् एक प्रकार के पक्षी एक साथ उड़ते हैं और एक स्थान पर बैठते हैं। यह कहावत बड़े महत्व की है। कारण कि स्थूल जगत के समान मानसिक जगत में भी प्रत्येक विचार अपने समान विचार से सम्बन्ध रखता है। यदि तुम चाहते हो कि दूसरे लोग तुम्हारे साथ दया का व्यवहार करें, तो तुम भी उनके साथ दया का व्यवहार करो। यदि तुम चाहते हो कि दूसरे लोग तुम्हारे साथ सच्चाई से व्यवहार करें, तो पहले तुम स्वयं सच बोलो जो कुछ तुम दोगे, वही तुमको मिलेगा, कारण कि यह संसार तुम्हारे विचारों का प्रतिबिम्ब है। कहने का सारांश यह है कि तुम दूसरों के साथ वैसा ही व्यवहार करो, जैसा तुम चाहते हो कि दूसरे तुम्हारे साथ करें।

यदि तुम इस बात के लिए प्रार्थना करते हो और यह अभिलाषा रखते हो कि मरने के पश्चात् तुम्हें स्वर्ग मिले, तो लो यह तुम्हारे लिए हर्ष का समाचार है कि तुम स्वर्ग में प्रवेश कर सकते हो और अभी अपने हृदय में उसका अनुभव कर सकते हो। जिस स्वर्ग की तुम इच्छा करते हो, वह सारे संसार में फैला हुआ है और तुम्हारे भीतर भी मौजूद है। देर केवल इस बात की है कि तुम उसे ढूँढ़ो, स्वीकार करो और उस पर अपना अधिकार जमा लो। एक अनुभवी विद्वान ने क्या ही अच्छा कहा है, कि जब लोग तुमसे यह कहें कि यह देखो, वह देखो, तो तुम उनके पीछे-पीछे मत दौड़ो। ईश्वरीय राज्य तुम्हारे ही भीतर मौजूद है। अन्यत्र कहीं जाने की आवश्यकता नहीं है। तुम्हारा कर्त्तव्य यह है कि तुम इस बात पर विश्वास करो और विश्वास भी सच्चे दिल से करो कि जिससे तुम्हारे हृदय से सर्व प्रकार की शंकाएँ दूर हो जाएँ और फिर तुम पुनः पुनः विचार करो, यहाँ तक कि तुम उसे अच्छी तरह समझ जाओ। बस फिर तुम अपने आन्तरिक जगत् को बनाने और उसे पवित्र रखने का उद्योग करोगे और ज्यों-ज्यों तुम्हारा ईश्वरीय ज्ञान बढ़ता जाएगा, त्यों-त्यों तुम्हें यह ज्ञात होता जाएगा कि वाह्य पदार्थों में कुछ भी शक्ति नहीं है। यह आत्मा ही है कि जिसमें जादू कैसी शक्ति विद्यमान है, इसके बाहर कुछ नहीं है।

❁❁❁

thearyasamaj.org

वैदिक विज्ञान का वायु तत्त्व

लेखकः– कृपालसिंह वर्मा, 253 शिवलोक, कंकरखेड़ा, मेरठ (उ0 प्र0) 9927887788

वैदिक विज्ञान में पांच तत्व हैं–(1) पृथिवी (2) जल (3) अग्नि (4) वायु (5) आकाश। आकाश रिक्त स्थान को कहते हैं।

पृथिवी गन्ध युक्त पदार्थों को कहते हैं।

जल गन्धहीन पदार्थों को कहते हैं।

पृथिवी तत्व तथा जल तत्व दोनों आधुनिक विज्ञान के Matter के अन्तर्गत आते हैं। इसी प्रकार अग्नि तत्व तथा वायु तत्व आधुनिक विज्ञान के Energy के अन्तर्गत आते हैं।

वैदिक विज्ञान की ये तीन पुस्तकें अति उत्तम हैं।

(1) महर्षि कणाद द्वारा रचित वैशेषिक दर्शन

(2) यजुर्वेद की वैज्ञानिक व्याख्या शतपथ ब्राह्मण।

(3) महर्षि यास्क द्वारा रचित निरुक्त शास्त्र

वैशेषिक दर्शन में कहा है–

स्पर्शवान् वायुः (2–1–4)

वायु में केवल स्पर्श का गुण होता है अर्थात् वायु की उपस्थिति का ज्ञान केवल स्पर्श द्वारा ही होता है। नेत्र, नासिका अथवा रसना द्वारा वायु की उपस्थिति का ज्ञान नहीं होता।

आधुनिक विज्ञान की गैसें वैदिक विज्ञान का वायुतत्व नहीं है। गन्धयुक्त गैसें पृथिवी तत्व के अन्तर्गत आती हैं तथा गन्धहीन गैसें जल तत्व के अन्तर्गत आती हैं।

सृष्टि के निर्माण क्रम में सबसे पहले वायु तत्व का निर्माण होता है। फिर 'वायोरग्निः' अर्थात् वायु तत्व से अग्नि तत्व का निर्माण होता है। फिर 'अग्नेरापः' अर्थात् अग्नि तत्व से जल तत्व का निर्माण होता है। फिर 'अद्भ्यः पृथिवी' अर्थात् जल से पृथिवी तत्व का निर्माण होता है।

यह विवरण तैत्तिरीय उपनिषद् में विद्यमान है।

वैदिक विज्ञान के अनुसार–

''सबसे सूक्ष्म टुकड़ा जो काटा नहीं जा सकता उसका नाम परमाणु, साठ परमाणुओं से मिले का नाम अणु, दो अणु का एक द्वयणुक जो स्थूल वायु है। तीन द्वयणुक की अग्नि, चार द्वयणुक का जल, पांच द्वयणुक की पृथिवी।'' (सत्यार्थ प्रकाश से)

इसका अर्थ यह है कि प्रकृति का सबसे सूक्ष्म कण जिसमें स्पर्श का गुण विद्यमान है, वह वायु तत्व का एक अणु है। वैदिक विज्ञान की भाषा में इसे स्पर्श तन्मात्रा कहते हैं। इस प्रकार वायु तत्व की एक

thearyasamaj.org

तन्मात्रा में 60X2=120 वैदिक परमाणु होते हैं।

आधुनिक विज्ञान की Heat और Electricity वैदिक विज्ञान के वायु तत्व के अन्तर्गत आते हैं। इन दोनों का ज्ञान केवल स्पर्श द्वारा ही होता है। आधुनिक विज्ञान का Light वैदिक विज्ञान के अग्नि तत्व के अन्तर्गत आता है। अग्नि तत्व का स्वभाविक गुण रूप हैं। रूप का ज्ञान नेत्र द्वारा होता है। अग्नि अर्थात् प्रकाश की उत्पत्ति ऊष्मा से होती है। ऊष्मा का योग होने के कारण प्रकाश में स्पर्श का गुण भी होता है।

इसलिए महर्षि कणाद ने वैशेषिक दर्शन में कहा है-

तेजोरूप स्पर्शवत् (2-1-3)

तेज अर्थात् अग्नि तत्व में रूप तथा स्पर्श का गुण होता है। वैदिक विज्ञान के अनुसार Heat तथा Electricity सूक्ष्म कणों से मिलकर बने हैं। दोनों ही वायु तत्व के रूप हैं। वायु के एक अणु में 120 वैदिक अणु होते हैं।

वायु तत्व में गतिशीलता का गुण होता है। गतिशीलता के कारण ही वायुतत्व में स्पर्श का गुण होता है।

महर्षि यास्क ने निरुक्त शास्त्र के दसवें अध्याय के प्रथम पाद में कहा है-

"वायु वातेर्वा। वेतेर्वा स्यात् गतिकर्मण:।"

सृष्टि निर्माण क्रम में सर्वप्रथम उत्पन्न होने वाला तत्व निरन्तर गति करने वाला होता है। इसलिए इस तत्व को वायु कहते हैं। वायु शब्द का अर्थ होता है निरन्तर गति करने वाला। वायु शब्द की उत्पत्ति गति अर्थ में 'वा' धातु से होती है।

शतपथ ब्राह्मण में दसवें कांड के तीसरे अध्याय के तीसरे ब्राह्मण में कहा है-

"य: स प्राण: अयमेव त वायुय: अयं पवते।"

जो शरीर में प्राण हैं वह वायु ही है जो गति करता है।

"यदा वा: अग्निरनुगच्छति। वायु तर्हि अनु उद्वाती"

जब अग्नि (Heat) निकल जाती है तो वह वायु रूप हो जाती है।

"यदा आदित्य: अस्तमेति वायं तर्हि प्रविशति"

जब आदित्य अर्थात् Light अस्त होती है तो वह वायु में प्रवेश कर वायु रूप हो जाती है।

दीपक के बुझने पर दीपक से निकला प्रकाश कहाँ चला जाता है? वह वायुरूप होकर वायु में प्रवेश कर जाता है। इससे उसका रूप गुण (प्रकाश का गुण) समाप्त हो जाता है तथा केवल वायु का स्पर्श का गुण शेष रहता है।

अत्यन्त क्रियाशील होने पर वायु तत्व प्रकाश में बदल जाता है। अर्थात् 120 वैदिक परमाणुओं से बना वायु कण प्रकाश के कण में बदल जाता है जिसमें 180 वैदिक परमाणु होते हैं।

जब प्रकाश वायु में बदलता है तो इसका अर्थ है कि 180 वैदिक परमाणुओं के कण में बदल

thearyasamaj.org

जाता है।

वैदिक विज्ञान के अनुसार किसी वस्तु का ताप उस वस्तु में स्थित वायु तत्व के कणों की क्रियाशीलता को प्रकट करता है।

वैदिक विज्ञान के अनुसार यदि हमें कोई वस्तु गर्म लग रही है तो इसका अर्थ है कि उस वस्तु में स्थित वायु तत्व के कणों की सक्रियता हमारे शरीर में स्थित वायु तत्व के कणों की सक्रियता से अधिक है। यदि वस्तु में स्थित वायु कणों की सक्रियता कम है तो वह वस्तु ठण्डी लगेगी। यदि समान है तो न गर्म लगेगी न ठण्डी।

और यह भी है कि–

(i) यदि किसी वस्तु में स्थित वायु तत्व के कण एक साथ असमान दिशाओं में गति करते हैं तो उस वस्तु का ताप बढ़ जाता है।

(ii) यदि किसी वस्तु में स्थित वायु के कण एक साथ समान दिशा में गति करते हैं तो वायु का इन्द्र रूप हो जाता है। इन्द्र को आधुनिक विज्ञान में Electricity कहते हैं।

(iii) जब आकाश में स्थित वायु कण गोलाकार गति (Circular Motion) करते हैं तो जल तत्व अर्थात् गन्धहीन पदार्थों का निर्माण होता है।

और यह भी है कि–

वैशेषिक दर्शन में कहा है–

"तेजस्युष्णता। (2-1-4)

उष्णता तेज अर्थात् अग्नि का स्वभाविक गुण है।

तथा अप्सुशीतता। (2-1-5)

शीतलता जल (Matter) का स्वभाविक गुण है।

सभी पदार्थ स्वभाव से शीतल होते हैं। अग्नि तत्व की विद्यमानता में ही ऊष्मा होते हैं।

❀❀❀

'तपोभूमि' मासिक पत्रिका मंगाने हेतु

एक वर्ष के लिए 150/– एक सौ पचास रुपये वार्षिक शुल्क,
पन्द्रह वर्ष के लिए 1500/– एक हजार पाँच सौ रुपये
आज ही भेजिये।

सत्साहित्य का प्रचार–प्रसार राष्ट्र की सर्वोत्तम सेवा है।

thearyasamaj.org

महर्षि दयानन्द गौरव गाथा

रचियताः –शिवकरण दुबे 'वेदराही', सिंगरौली, पो० शक्तिनगर, जिला–सोनभद्र (उ० प्र०)

ऐ ऋषि! तूने बचायी डूबती नैया वतन की।
बनके माली आन रखी तूने इस उजड़े चमन की।

मिट रहे थे चिह्न सारे धर्म और ईमान के
हम लड़ा करते रहे बस, नाम पर भगवान के
रोशनी की दीप बनकर, मिट गई स्याही पतन की।
ऐ ऋषि! तूने बचायी डूबती नैया वतन की॥ 1॥

बाल–विधवाओं की आहें, फलक पे चिन्गारियों सी
गिर रही थी साख घर की, राख बनकर आंधियों सी
तूने रोते को हँसाया, दाद दूँ क्या तेरे इल्मोफन की।
ऐ ऋषि! तूने बचायी डूबती नैया वतन की॥ 2॥

भूल बैठ नाम तक थे, आर्यजन अपनी निशानी
बूढ़े पुरखे कह रहे थे, तोता–मैना की कहानी
तूने आकर सुध दिलाई, वेद के पाठन–पठन की।
ऐ ऋषि! तूने बचायी डूबती नैया वतन की॥ 3॥

मूर्तियों की कर इवादत, देवदासी थे बनाते
कत्ल कर जिन्दा पशु को देवमंदिर पर चढ़ाते
दूर की तूने रिवायत, धर्म के बिगड़े चलन की।
ऐ ऋषि! तूने बचायी डूबती नैया वतन की॥ 4॥

"वेदराही" देख लो अब आ रहा है इन्कलाब
फिर जगेगा देश सारा, पूरे होंगे ऋषि के ख्वाब,
ध्यान से सुनना शदाएँ वेद युग के आगमन की।
ऐ ऋषि! तूने बचायी डूबती नैया वतन की॥ 5॥

thearyasamaj.org

पूजा-धर्म

लेखकः -महात्मा हंसराज, बी० ए०

(1) हे राजन्! इसी से आपके जन्म का साफल्य होवे, जिससे आप ईश्वर के सदृश पक्षपात का त्याग करके प्रजाओं का पालन करो।

(2) हे राजन्! जैसे बिजली और भूमि में प्रसिद्ध हुए रूप से अग्नि सबका उपकार करता है और जैसे परमेश्वर असंख्यात पदार्थों के उत्पन्न करने से पितरों के सदृश सबका पालन करता है, वैसे आप हुजिये।

(3) जो अग्नि के सदृश प्रतापी, जगदीश्वर के सदृश न्यायकारी, विद्वान् और उत्तम लक्षणों वाला राजा होता है वही चक्रवर्ती राजा होने योग्य है।

(4) हे मनुष्यो! आप लोग परमेश्वर के सदृश वर्ताव करके सबके कल्याण को करो।

(5) हे मनुष्यो! जो पृथिवी आदि में अग्नि आदि पदार्थ है, उनको जानके फिर ईश्वर को जानो।

(6) हे मनुष्यो! जैसे योगी जन संयम अर्थात् इन्द्रियों को अन्य विषयों से रोकने से परमात्मा को प्राप्त होकर नित्य आनन्दित हुजिये।

(7) जैसे शिल्पीजन अग्नि आदि तत्वों को विद्या को प्राप्त होकर और अनेक कार्यों को सिद्ध करके प्रयोजनों को सिद्ध करते हैं, वैसे मनुष्य परमात्मा को यथावत् जानके अपनी इच्छाओं को सिद्ध करें।

(8) वे ही मनुष्य विद्वान् हैं जो पूर्व और आगे वर्त्तमान विद्वानों को मिलकर परमेश्वर प्रकृति और जीव के कार्य को विद्या को जानते हैं।

(9) हे मनुष्यो! जो अतिथि आत्मा का जाननेवाला, सत्य का उपदेशक, विद्वान्, विद्वानों को प्रिय, परमात्मा के सदृश सबके हित को चाहने वाला, नित्य क्रीड़ा करता है, वह सत्कार करने योग्य है।

(10) हे राजन्! जैसे परमात्मा सबमें अभिव्याप्त सबका रक्षक और सबके लिये मंगलदाता, सब पदार्थों का दाता और सुखकारी है, वैसे ही राजा को होना चाहिये।

(11) हे विद्वानों! जैसे जगदीश्वर, धर्मिष्ठजनों के लिये धर्मात्मा राजा को देता है और जैसे उत्तम सेना विद्वान् शूरवीर और धर्मात्मा सेनाध्यक्ष को प्राप्त होकर शत्रुओं को जीतती हैं, वैसे ही वह सब लोगों को आदर करने योग्य है।

(12) हे मनुष्यो! जो यह सूर्य देख पड़ता है, वह अनेक तत्वों के द्वारा ईश्वर से बनाया गया है और बिजली के आश्रित है और जिसके प्रभाव से पूर्व आदि दिशायें विभक्त की जाती है और रात्रियाँ होती हैं, उस अग्निरूप सूर्य को जानके सम्पूर्ण कृत्य सिद्ध करो।

thearyasamaj.org

(13) हे विद्वन्! जैसे ईश्वर ने सूर्य और मेघ का सम्बन्ध रचा, वैसे ही अन्य भी बहुत सम्बन्ध रचे, यह जानना चाहिये।

(14) जो मनुष्य ईश्वर आदि पदार्थों की सेवा करते हैं, वे जानने योग्य पदार्थों के जानने वाले होते हैं।

(15) मनुष्यों को चाहिये, कि उत्तम बल और परमात्मा की निरन्तर प्रशंसा करें।

(16) हे मनुष्यो! जो वृद्धावस्था व मरणावस्था रहित, सत्, चित् और आनन्द स्वरूप, नित्य गुण, कर्म और स्वभाव वाला जगदीश्वर है, उसकी आप सब लोग उपासना करो।

(17) जो मनुष्य ईश्वर के सदृश न्यायकारी हैं वे संसार के उपकार करने वाले और उपदेशक हैं वे संसार के भूषण हैं।

(18) हे मनुष्यो! ब्रह्मचर्य से शरीर और आत्मा के बल को धारण करके और क्रिया कुशलता को जानके जैसे ईश्वर अन्तरिक्ष में सम्पूर्ण पदार्थों को उत्पन्न करता है वैसे ही आप लोग अनेक व्यवहारों को सिद्ध कीजिये।

(19) जो मनुष्य सम्पूर्ण सत्य विद्याओं को प्राप्त होकर, यथार्थ वक्ता परमात्मा और उसकी आज्ञा का सेवन करते हुए महाशय, पूर्ण शरीर और आत्मा के बल से युक्त, अध्यापन और उपदेश से हम लोगों की वृद्धि करते हैं वे ही सर्वदा हम लोगों से सत्कार करने योग्य हैं।

(20) हे मनुष्यो! अपराध, अनपराध तथा सत्य और असत्य को कौन जानता है यह हम पूछते हैं, जो प्रमाद से रहित और परमेश्वर के भक्त हों।

(21) हे मनुष्यो! जो यह सूर्यलोक है वह परमेश्वर से अनेक तत्वों द्वारा रचा गया है इस कारण अनेक गुणों से युक्त है उसको तुम लोग यथावत् जानो।

(22) हे मनुष्यो! जो वायु बिजली और सूर्य सम्पूर्ण लोक के धारण करने वाले हैं वे परमेश्वर से धारण किये गये हैं ऐसा जानकर सम्पूर्ण ईश्वर ने ही धारण किया ऐसा जानना चाहिये।

(23) अनेक विद्या वृंहित, बुद्धि आदि पदार्थों के अधिष्ठान, जगदीश्वर के बीच जो मन और बुद्धि को निरन्तर स्थापन करते हैं वे समस्त ऐहिक और पारलौकिक सुख को प्राप्त होते हैं।

(24) हे मनुष्यो! जिस जगदीश्वर ने विचित्र और अनेक प्रकार के जगत् को सम्पूर्ण प्राणियों के सुख के लिये रचा उसी जगदीश्वर की आप लोग उपासना करो।

(25) हे मनुष्यो! जो सूर्य आदि धारण करने वालों का धारण करने वाला और देने वालों का देनेवाला बड़ों का बड़ा और प्रकृति रूप कारण से सम्पूर्ण जगत् को रचता है और जिसके पीछे अर्थात् आश्रय से सब जीवते और स्थित हैं वही सम्पूर्ण जगत् का रचनेवाला ईश्वर ध्यान करने योग्य है।

(26) हे मनुष्यो! जो सबका स्वामी, ईश्वर, तीन-बिजली, सूर्य और चन्द्रमा रूप बड़े दीपों को रचके सर्वत्र व्याप्त और सबका मित्र हुआ और सूर्य आदि को अभिव्याप्त हो और धारण करके प्रकाशित करता है वही सब प्रकार पूज्य है अर्थात् उपासना करने योग्य है।

(27) हे मनुष्यो! जिसके महत्व के जानने के लिये सूर्य आदि लोक दृष्टान्त हैं उसी सम्पूर्ण परमेश्वर्य के देनेवालों का तुम ध्यान करो। ❁❁❁

thearyasamaj.org

अतीत

लेखकः – पं० चतुरसेन शास्त्री

तपोवन महर्षि सनत्कुमार तपोवन में अपने आश्रम में बैठे थे। प्रख्यात देवर्षि नारद ने समित्पाणि (शिष्य की तरह) आकर प्रणाम किया। महर्षि ने पूछा–"वत्स! तुम कौन हो?" नारद ने कहा–"मैं नारद हूँ।" महर्षि बोले–"क्या चाहते हो?" उत्तर में नारद ने कहा–"पढ़ना चाहता हूँ।" महर्षि ने फिर पूछा–अब तक क्या पढ़े हो?"

नारद कहते हैं–

"ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद, इतिहास, पुराण, वेदों का वेद (व्याकरण), पित्र्य (पारलौकिक रहस्य), रासि (गणित–शास्त्र) दैव (शुभ लक्षणों का शास्त्र), निधि (समय का शास्त्र), वाकोवाक्य (तर्क–शास्त्र), एकायन (नीति–विद्या), देवविद्या (शब्दों की उत्पत्ति की विद्या), ब्रह्म–विद्या (ईश्वर–ज्ञान), भूत–विद्या (प्राणि–शास्त्र), क्षत्र–विद्या (शस्त्र चलाना), नक्षत्र–विद्या (ज्योतिष शास्त्र), सर्प–देवजन– विद्या (अदृष्ट होने और आकाश–गमन की विद्या) यह सब मैं जानता हूँ।

इस घटना का उल्लेख छान्दोग्य उपनिषद् के सप्तम पाठ में है। जिस काल की यह चमत्कारिक घटना है हमारे हिसाब से तो उसे बहुत ही समय हुआ; परन्तु यूरोपियन विद्वानों के मत से भी यह अब से कोई साढ़े तीन हजार वर्ष पूर्व की घटना है। इस घटना से यह प्रमाणित होता है कि अब से 3–4 हजार वर्ष पूर्व भारत की शिक्षा की दशा कैसी थी। गुरु लोगों की विद्या की तौल करने की तो कोई तराजू है ही नहीं–केवल शिष्य की योग्यता का यह अपूर्व उदाहरण है, जिसे संसार चकित दृष्टि से हम गर्व की दृष्टि से प्रलय तक देखते रहेंगे।

अब लगभग उसी काल की शासन–व्यवस्था और समाज–संगठन एक उदाहरण सुनिये जो निस्सन्देह अपूर्व है।

केकय देश के राजा अश्वपति ने एक यज्ञ किया था। उसमें ऋषि शाल, सत्ययज्ञ, इन्द्रद्युम्न, जनकुण्डिल आदि ऋषि ऋत्विग् बनाये गये थे। उद्दालक, आरुणी उस काल में उसके राज्य में होकर गुजरे। राजा ने यह समाचार सुना तो वह दौड़ कर ऋषि के पास गया और बोला–

भगवन्! मेरे राज्य में न चोर हैं, न कायर है, और न शराबी है। न कोई ऐसा है जो नित्य अग्निहोत्र न करता हो। न कोई मूर्ख है, न व्यभिचारी है, न व्यभिचारिणी है। फिर आप क्यों नहीं मेरे राज्य में वास करते हैं? इस यज्ञ में आप भी ऋत्विक् बनिये और मैं जितना अन्य ऋषियों का पूजा–सत्कार करूँगा उतना आपका भी करूँगा। कृपा कर मेरे नगर में बसिये।"

यह कथा शतपथ ब्राह्मण (10। 6। 1। 1) में लिखी है और छान्दोग्य उपनिषद में (5। 2) भी है।

यह भारत के उस काल की सुशासन व्यवस्था का उदाहरण है जिसका आज तक इतिहास ही नहीं बना है और जिस काल की कल्पना उन विदेशी विद्वानों से नहीं हो सकती जो अब से 2000 वर्ष पूर्व जंगली

thearyasamaj.org

पशु के समान थे। वे इस काल की अब से 4000 वर्ष पुराना बताते हैं, पर वास्तव में यह भारत का बहुत पुराना अतीत है। हमारे हिसाब से इस काल को लाखों वर्ष बीत गये हैं। पर आज क्या कोई राजा ऐसे शब्द कह सकता है? राज्याभिषेक के समय पुरोहित जिन शब्दों से राजा को उपदेश देते थे जरा उनकी गम्भीरता सुनिये–

"वह ईश्वर जो जगत् का राज्य करता है, तुम्हें अपनी प्रजा का राज्य करने की शक्ति दे। वह अग्नि जो गृहस्थों से पूजी जाती है, तुम्हें गृहस्थों पर प्रभुत्व दे। वृक्षों का स्वामी सोम तुम्हें वनों पर प्रभुत्व दे। वाणी का देवता बृहस्पति तुम्हें बोलने में प्रभुत्व दे। देवताओं में श्रेष्ठ इन्द्र तुम्हें सब प्रभुत्व दे। जीवों का पालक रुद्र तुम्हें जीवों पर प्रभुत्व दे। मित्र जो कि सत्य का देवता है, तुम्हें सत्यता में अति श्रेष्ठ बनावे। वरुण जो पुण्यकार्यों का रक्षक है, तुम्हें पुण्य के कार्यों में अति श्रेष्ठ बनावे।" –(शेष अगले अंक में)

पृष्ठ संख्या 7 का शेष–

वानरों द्वारा छिन्न–भिन्न करके उजाड़ दी गई॥ 123॥

ईश्वरानुग्रहैः प्राप्तो विरजानन्दसद्गुरुः।
वेदविद्योदयायाद्धा दयानन्देन भारते॥ 124॥

चिरकाल पश्चात् पुनः ईश्वर की कृपा से ब्रह्मचारी दयानन्द ने भारत में फिर वेदविद्या के अभ्युदय के लिये विरजानन्द जैसे सद्गुरु प्राप्त किये॥ 124॥

आर्षदर्शं गुरुकुलममलं ज्ञानं यस्मादधिगतमखिलम्।
ब्रह्मज्ञानं प्रथयितुमवनौ निष्क्रान्तोऽयं यतिरतिविनतः॥ 125॥

स्वामी विरजानन्दजी का गुरुकुल आर्षविद्याओं के प्रचार के लिये था। जहाँ पर दयानन्द आर्ष एवं वैदिकज्ञान संपादन किया और विद्याध्ययन के अनन्तर संसार में आर्षविद्याओं के प्रचार के लिये गुरु से नम्रतापूर्वक विदाई लेकर निकल पड़े॥ 125॥ ❀❀❀

महापुरुषों की जयन्ती

भाई परमानन्द	4 नवम्बर
गुरूनानक	5 नवम्बर
विपिनचन्द पाल	7 नवम्बर
सुरेन्द्रनाथ बनर्जी	10 नवम्बर
पं0 जवाहरलाल नेहरू	14 नवम्बर
इन्दिरा गाँधी	19 नवम्बर
रानी लक्ष्मीबाई	19 नवम्बर
वीरांगना झलकारीबाई	22 नवम्बर
पट्टाभी सीता रमैया	24 नवम्बर

महापुरुषों की पुण्यतिथि

महर्षि दयानन्द सरस्वती	5 नवम्बर
विनोबा भावे	15 नवम्बर
महात्मा हंसराज	15 नवम्बर
शहीद करतारसिंह	16 नवम्बर
लाला लालजपतराय	17 नवम्बर
जगदीशचन्द्र बसु (वैज्ञानिक)	23 नवम्बर
गुरु तेगबहादुर	24 नवम्बर
महात्मा ज्योतिवा फुले	28 नवम्बर

thearyasamaj.org

पुरुषार्थ

रचयिताः सुमित्रानन्दन पंत

कभी न पीछे हटने वाले ही पाते जय
बहिरंतर के ऐश्वर्यों का करते संचय।
बह प्रतिजन का हो अथवा सामूहिक वैभव
ऐहिक आत्मिक सुख पुरुषार्थी के हित सम्भव।
ठुकरा सकते वीर मृत्यु-पद जो पग-पग पर
आत्म-त्याग उत्सर्ग-हेतु जो रहते तत्पर।
दीर्घ विशद विस्तृत जीवन धारण कर निश्चय
धान्य प्रजा संयुक्त सदा बनते समृद्धिमय
शुद्ध चित्त बन दीप्त अभीप्सा हवि कर अर्पित
विश्व-यज्ञ में बनें मनुज सब अमृत मृत्युजित्।
उठें सत्य से प्रेरित होकर दुर्बल पीड़ित
बनें सत्य के सम्मुख सत्ताधारी विनमित।
ऋत की रे सम्पदा शुद्ध निष्कलुष सनातन
सुनता है आह्वान सत्य का बधिर भी श्रवण!
दुह सुहस्त गोधुक कोई सुदुघा गो को नित
हमें पिलावे सविता का रस ऋत दुग्धामृत॥

❁❁❁

नारायण हो मेरे नर !

रचयिताः मैथिलीशरण गुप्त

पार उतरना है तो तर,
नारायण हो मेरे नर !

यहां उसी का स्नेह फला,
जो दीपक-सा उजल जला।
यों सबका निर्वाण भला,
अन्तर से अन्तर भर।
नारायण हो मेरे नर !

बन्धन जावें, नियम रहें,
भव न बहें, सौ विभव बहें।
दुःख भले, हम जिन्हें सहें,
विचर जहां निर्वैर विचर।
नारायण हो मेरे नर !

thearyasamaj.org

'तपोभूमि' नवम्बर 2014 R.N.I. No. 2321/57 रजि. सं. MTR नं. 04/2013-15

सत्य प्रकाशन मथुरा के अनमोल प्रकाशन

शुद्ध रामायण	150.00	शुद्ध सत्यनारायण कथा	10.00
शंकर सर्वस्व	120.00	महिला गीतांजलि	10.00
मानस पीयूष (रामचरित मानस)	100.00	क्या भूत होते हैं	10.00
नारी सर्वस्व	60.00	आर्यों की दिनचर्या	10.00
शुद्ध कृष्णायण	50.00	महाभारत के कृष्ण	8.00
शुद्ध हनुमच्चरित (प्रेस में)	40.00	व्रजभूमि और कृष्ण	8.00
संस्कार चन्द्रिका प्रथम भाग	40.00	सच्चे गुच्छे	8.00
विदुर नीति	40.00	मृतक भोज और श्राद्ध तर्पण	8.00
वैदिक स्वर्ग की झांकियाँ	40.00	नवग्रह समीक्षा	6.00
चाणक्य नीति	40.00	आर्यसमाज और श्रीराम	6.00
वेद प्रभा	30.00	आचार्य श्रीराम शर्मा : एक सरल चिन्तन	5.00
शान्ति कथा	30.00	वृक्षों में जीव है या नहीं	5.00
नित्य कर्म विधि	30.00	गायत्री गौरव	5.00
संगीत रत्नाकर प्रथम भाग	25.00	महर्षि दयानन्द की मान्यतायें	5.00
बाल सत्यार्थ प्रकाश	25.00	सफल व्यक्तित्व	5.00
यज्ञमय जीवन (प्रेस में)		सर्वश्रेष्ठ कहानियाँ	5.00
दो बहिनों की बातें	25.00	मुक्ति प्रदाता त्रिवेणी	5.00
दो मित्रों की बातें	25.00	जीजा साले की बातें	5.00
मील का पत्थर (प्रेस में)		भागवत के नमकीन चुटकुले	5.00
सुमंगली (प्रेस में)		आदर्श पत्नी	5.00

आवश्यक सूचना

1. पाठकगण वर्ष 2014 के लिये वार्षिक शुल्क 150/- रूपये अविलम्ब भिजवायें तथा पन्द्रह वर्ष की सदस्यता हेतु 1500/- भिजवायें।
2. पत्रिका भेजने की तारीख प्रतिमाह 7 व 14 है, कृपया ध्यान रखें।

बुक-पोस्ट
छपी पुस्तक/पुस्तिका

सेवा में,

....

....

....

....

.... पिन कोड ....

पत्र व्यवहार का पता :-
व्यवस्थापक - कन्हैयालाल आर्य
सत्य प्रकाशन
डाकघर- गायत्री तपोभूमि, वृन्दावन मार्ग
(आचार्य प्रेमभिक्षु मार्ग), मसानी चौराहे के पास,
मथुरा (उ० प्र०) 281003
फोन (0565) 2406431
मो. 9759804182

Yogendra # 9927136600

स्वामी, प्रकाशक, सम्पादक आचार्य स्वदेश के लिए रमेश प्रिन्टिंग प्रेस, पंचवटी, मथुरा में छपकर सत्य प्रकाशन मथुरा से प्रकाशित